चकमक

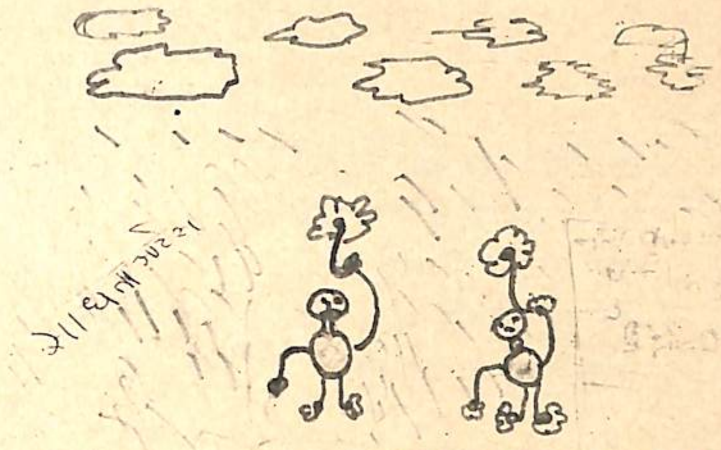
अगस्त, 1994 बाल विज्ञान पत्रिका रु. 5.00



शुक्र पर जीवन : एक कल्पना



मोहित ठाकुर, दस वर्ष, दल्ली राजहरा, दुर्ग, म.प्र.



साधना चौहान, नौ वर्ष, ग्वालियर, म.प्र.

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-10 अंक 2 अगस्त 1994

संपादक

विनोद रायना

सह-संपादक

राजेश उत्साही

कविता सुरेश

संपादन सहयोग

टुलटुल विश्वास

कला-सज्जा

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

कमलसिंह, मनोज निगम

चकमक का चंदा

एक प्रति : पांच रुपए

छमाही : पच्चीस रुपए

वार्षिक : पचास रुपए

डाक ख़र्च मुफ्त

चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ़्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।

कृपया चेक न भेजें।

काग़ज : यूनिसेफ के सौजन्य से।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य,

ई-1/208,

अरेरा कॉलोनी,

भोपाल-462016

(म. प्र.)

फ़ोन : 563380

108 वें अंक में...

विशेष

कहानी

कविताएँ

धारावाहिक

हर बार की तरह

और यह भी

आवरण परिचय

पाँचवे दशक में अमरीकी चित्रकार रॉन मिलर ने अरहेनियस के 'गीले शुक्र' के सिद्धांत (1918) के आधार पर अपनी कल्पना से यह चित्र बनाया था। इसे हमने नेशनल ज्योग्राफिक के 'स्पेसस्कोप' नामक स्लाइड प्रदर्शनी से साभार लिया है।

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।



तब ही तो आज़ादी है!

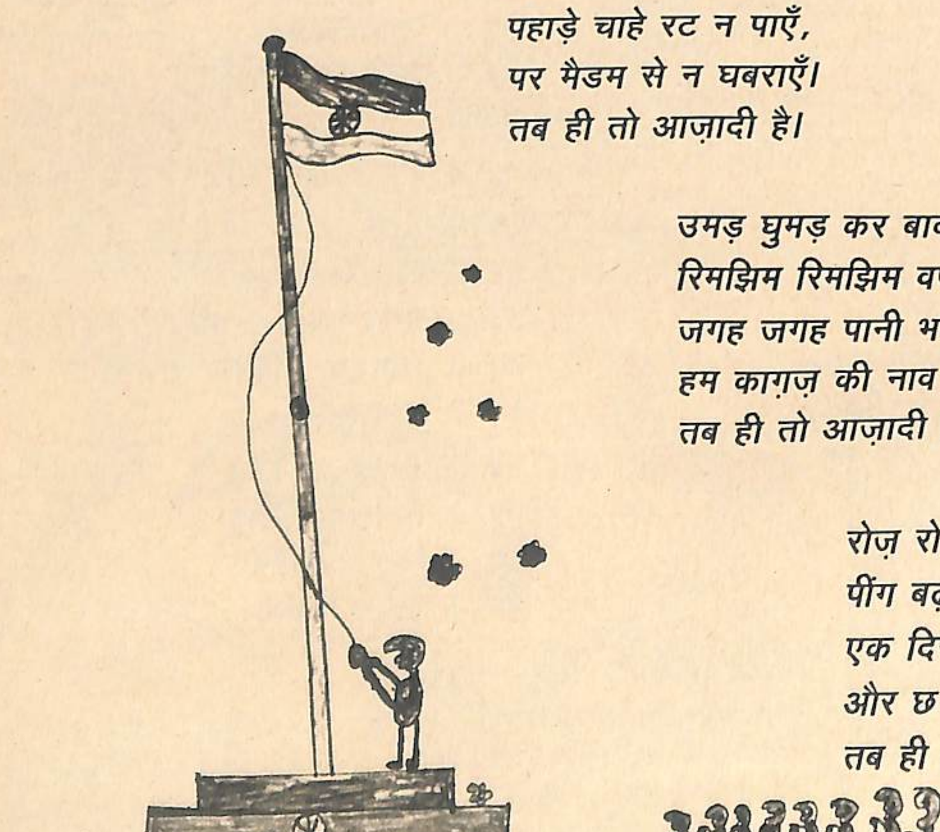
उत्तर का विशाल मैदान हो,
दक्षिण का फैला पठार हो।
पंछी से हम भी उड़ पाएँ,
दूर दूर की सैर को जाएँ।
तब ही तो आज़ादी है।

पैंसिल रबड़ चाहे खो जाए,
कपड़ों पर स्याही गिर जाए।
गोली टॉफ़ी खूब उड़ाएँ,
पर मम्मी की डाँट न खाएँ
तब ही तो आज़ादी है।

गणित में चाहे लाएँ 'ज़ीरो'
कक्षा में कहलाएँ हीरो।
पहाड़े चाहे रट न पाएँ,
पर मैडम से न घबराएँ।
तब ही तो आज़ादी है।

उमड़ घुमड़ कर बादल छाएँ,
रिमझिम रिमझिम वर्षा लाएँ।
जगह जगह पानी भर जाएँ,
हम काग़ज़ की नाव चलाएँ।
तब ही तो आज़ादी है।

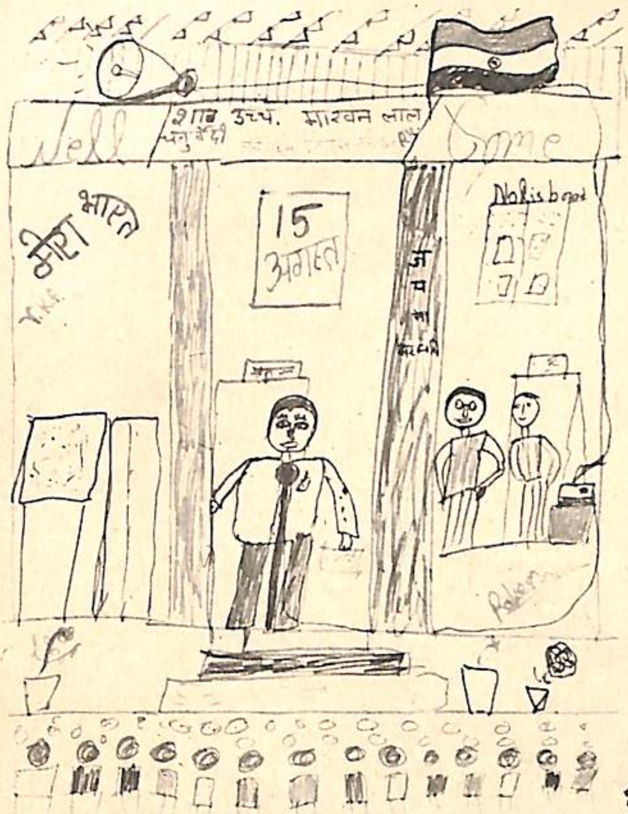
रोज़ रोज़ झूले में झूलें,
पींग बढ़ा आकाश को छूलें।
एक दिन स्कूल लगे,
और छः दिन छुट्टी के हो जाएँ।
तब ही तो आज़ादी है।



❑ गरिमा माथुर, ग्यारह वर्ष,
नई दिल्ली

हरीश राय, चौथी, पिपरिया. म.प्र.

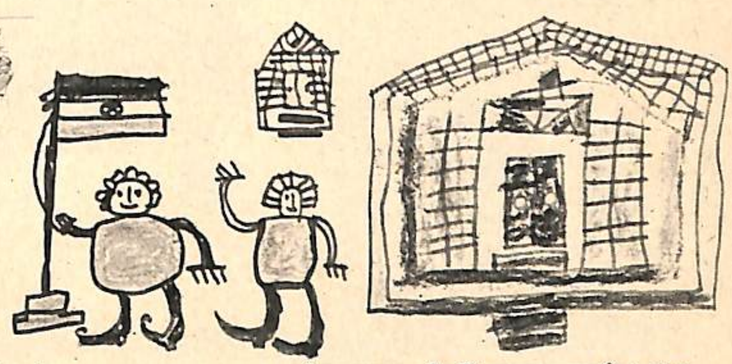




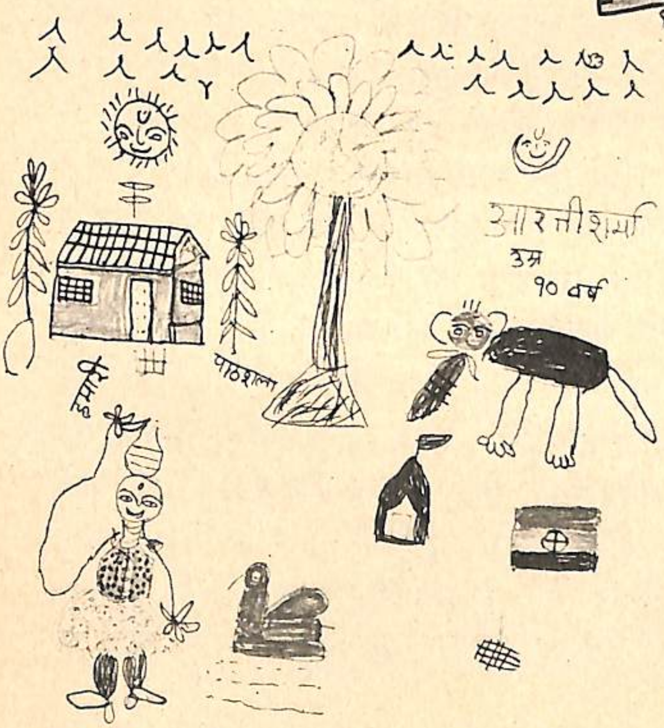
राकेश मालवीया, आठवीं, हिरणखेड़ा, होशंगाबाद, म.प्र.



नवीन भँवर, धार, म.प्र.



सुनील कुमार, पाँचवीं, नरवर, उज्जैन, म.प्र.



आरती शर्मा, दस वर्ष, धार, म.प्र.



दिनेश खण्डेलवाल, आठवीं, चौकड़ी होशंगाबाद, म.प्र.

चतुराई

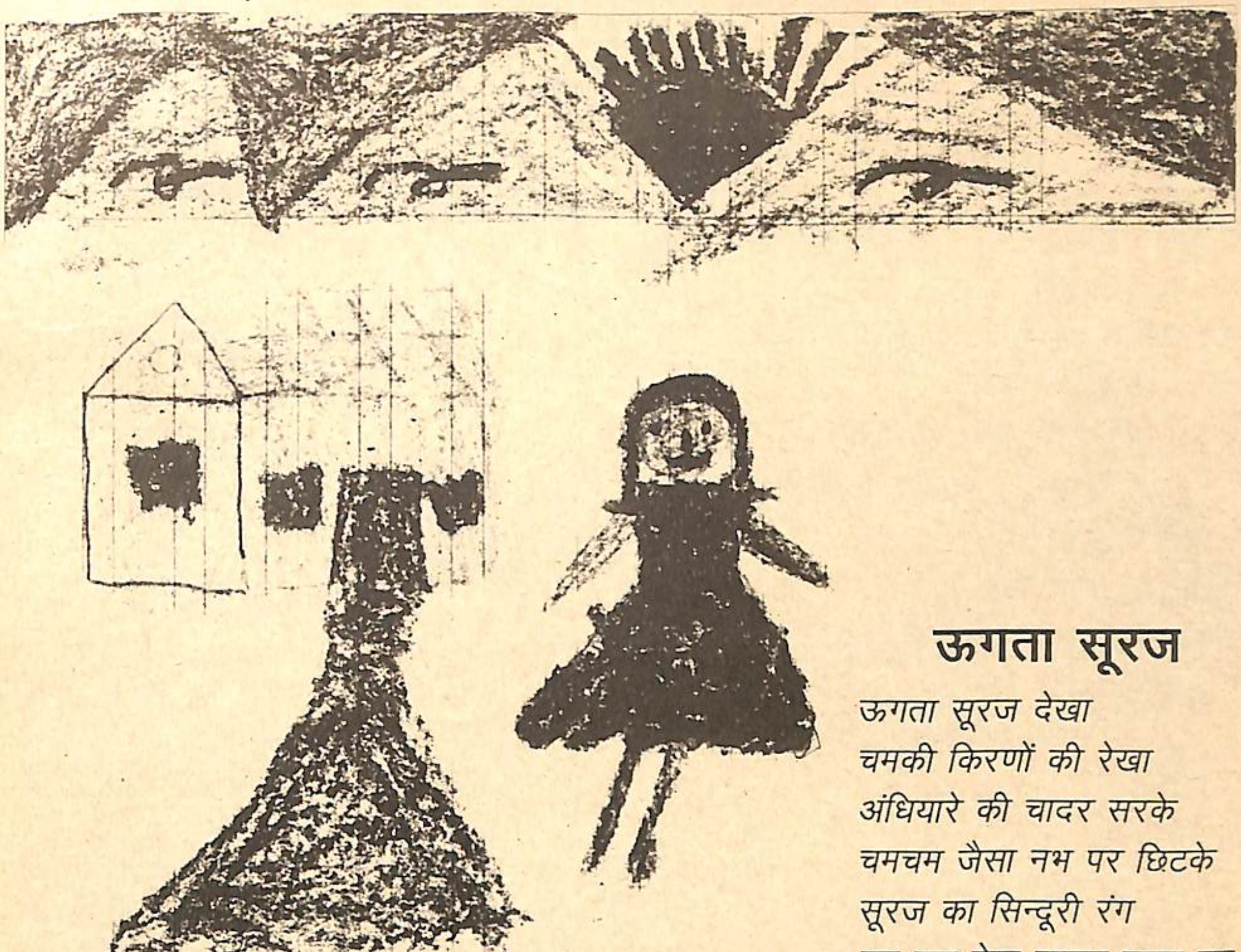


रत्नेश पाण्डेय, चौथी, छतरपुर, म.प्र.

एक दिन मैं और मेरा दोस्त भागचन्द्र तालाब नहाने गए। तभी एक लड़का आया और पानी में कूद गया। वह लड़का तैरना नहीं जानता था। वह डूबने लगा, चिल्लाने लगा। हम लोगों ने देखा और उसे बचा लिया। फिर हम लोग क्रिकेट खेलने गए। मैंने बीस रन बनाए और भागचन्द्र ने पन्द्रह रन बनाए। इसके बाद हम लोगों को आठ रन की ज़रूरत थी। तभी मेरा भाई अभिलाष आया और उसने दो चौके लगाए और हम लोगों की टीम जीत गई। मैं टीम का कप्तान था इसलिए मैंने दस रुपए ले लिए। उस टीम का कप्तान चालाक था। उसने एक लड़के को मेरे पैसे चुराने भेजा। उसे पैसे चुराते हुए उस लड़के ने देख लिया जिसे हमने डूबने से बचाया था। उसने मुझसे कह दिया, हम लोगों ने उससे पैसे छुड़ा लिए।

लेकिन जब हम सड़क पर पहुँचे तब उस टीम के कप्तान और प्लेयरों ने हमें घेर लिया, हम लोगों ने भागने की कोशिश की मगर नहीं भाग पाए। हम सभी के चेहरे पीले पड़ गए। तभी मेरी नज़र केले के छिलकों पर गई। मैं गया और मैंने केले के छिलके उठा लिए और जैसे ही वो लोग बढ़े मैंने छिलके बिखेर दिए। उन्होंने छिलके नहीं देखे। जैसे ही उनके पैर छिलकों पर पड़े वो फिसलकर गिर पड़े। हम लोग बहुत हँसे। वो लोग शर्मिन्दा हुए। फिर वे किसी से नहीं लड़े।

❑ अनुराग पटैरिया, पाँचवीं, बक्सवाहा, छतरपुर, म.प्र.



मोनिका कोटवानी, आठ वर्ष, भोपाल, म.प्र.

ऊगता सूरज

ऊगता सूरज देखा
चमकी किरणों की रेखा
अंधियारे की चादर सरके
चमचम जैसा नभ पर छिटके
सूरज का सिन्दूरी रंग
यह सब देख बादल लाल हुए
अम्बर पर रंगों का मेला
सूरज चलता फिर भी अकेला
सुबह-सुबह जो जग जाता वह
कुदरत के रंगों को पाता है।

❑ उमेश कुमार मानकर, चौकड़ी, होशंगाबाद, म.प्र.

कुकर का मुठिया

रात ज़्यादा हो गई थी। नींद आ रही थी। आँखें बन्द हो रही थीं। इसलिए मेरा भैया पढ़ना बन्द करके पानी पीने के लिए मटके के पास आया। पानी पी रहा था कि तभी उसकी नज़र बर्तन की अलमारी पर पड़ी। उसने ज़ोर से कहा ''साँप-साँप।'' मेरी मम्मी जाग गईं, और उन्होंने हम सबको जल्दी-जल्दी उठाया। और फिर भैया से कहा, ''कहाँ है साँप?'' भैया ने कहा, ''वो देखो बर्तन की अलमारी पर।''

मम्मी ने गौर से देखा और आलमारी को डण्डी से ठोंका। परन्तु कुछ नहीं हुआ। तब मम्मी ने पास जाकर देखा। वो तो कुकर का मुठिया था। मम्मी हँस पड़ी और कहा, ''यह साँप नहीं कुकर का मुठिया है।" और फिर हम सब हँस पड़े।

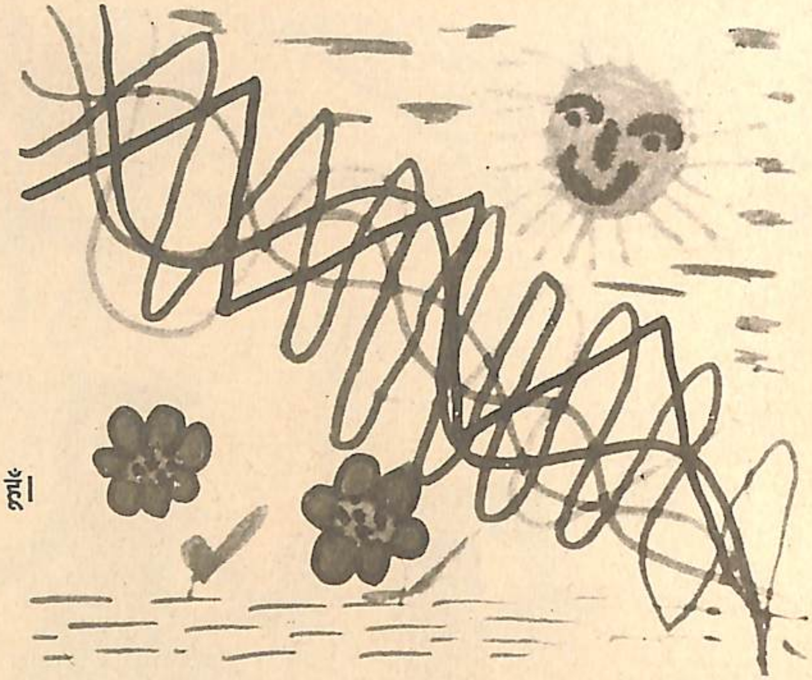
❑ सुनीता बौरासी, आठवीं, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.



फूल

मैं फूल मैं फूल
रंग बिरंगा मैं फूल
सारे जहाँ में खुशबू फैलाता हूँ
मैं फूल मैं फूल
बचपन से लेकर बुढ़ापे तक
मैं सब मनुष्य के काम आता हूँ।
मैं फूल मैं फूल
खुशी हो या ग़म मगर
सबके जीवन को महकाता हूँ
मैं फूल मैं फूल।

❑ सुमित सक्सेना, सातवीं, नई दिल्ली



नुपूर तिवारी, तीसरी

मेरी यात्रा

हमने एक बार हमारी दादी के घर जाने की योजना बनाई। मैं सुबह पाँच बजे उठकर मुँह धोकर, नहाकर तैयार हुआ। और यात्रा चालू की। हम हमारी पाठशाला के सामने से निकले। हमें वहाँ पर बहुत से आम के पेड़ दिखाई दिए। उनमें बहुत-से आम लगे थे। पर हम तोड़ते कैसे वहाँ पर माली खड़ा था। आगे एक किलो मीटर दूर जाकर हमें एक आम का पेड़ और मिला। हमने उसमें से आम तोड़े पर सब कच्चे थे। हम फिर चाका पहुँचे। वहाँ से चलकर विजय राघवगढ़ पहुँचे।

वहाँ पुलिस थाने में हम दादा जी से मिले। फिर हम घर गए, घर में मेरे चाचा, बुआ, दादी सब थे। हमने वहाँ का क़िला भी देखा। उसके पश्चात हमारे घर के पीछे हम नदी में नहाने गए।

घर में एयर गन थी उससे हमने निशाना लगाया। शाम को हम वहाँ के प्रसिद्ध मन्दिर पहुँचे। फिर रात का खाना खाया।

दूसरे दिन सुबह घर से निकल पड़े। लगभग एक घण्टे में हम घर पहुँच गए।

❑ पुष्पराज सिंह बैस, चौथी, कटनी, म.प्र.



महेश चंद्र वर्मा, दसवीं, पोलायकलां, शाजापुर, म.प्र.

खेतों में हरियाली



श्रुतिप्रिया, पटियाला, पंजाब

फैली खेतों में दूर तक हरियाली
लिपटी जिस में सूर्य की किरणें

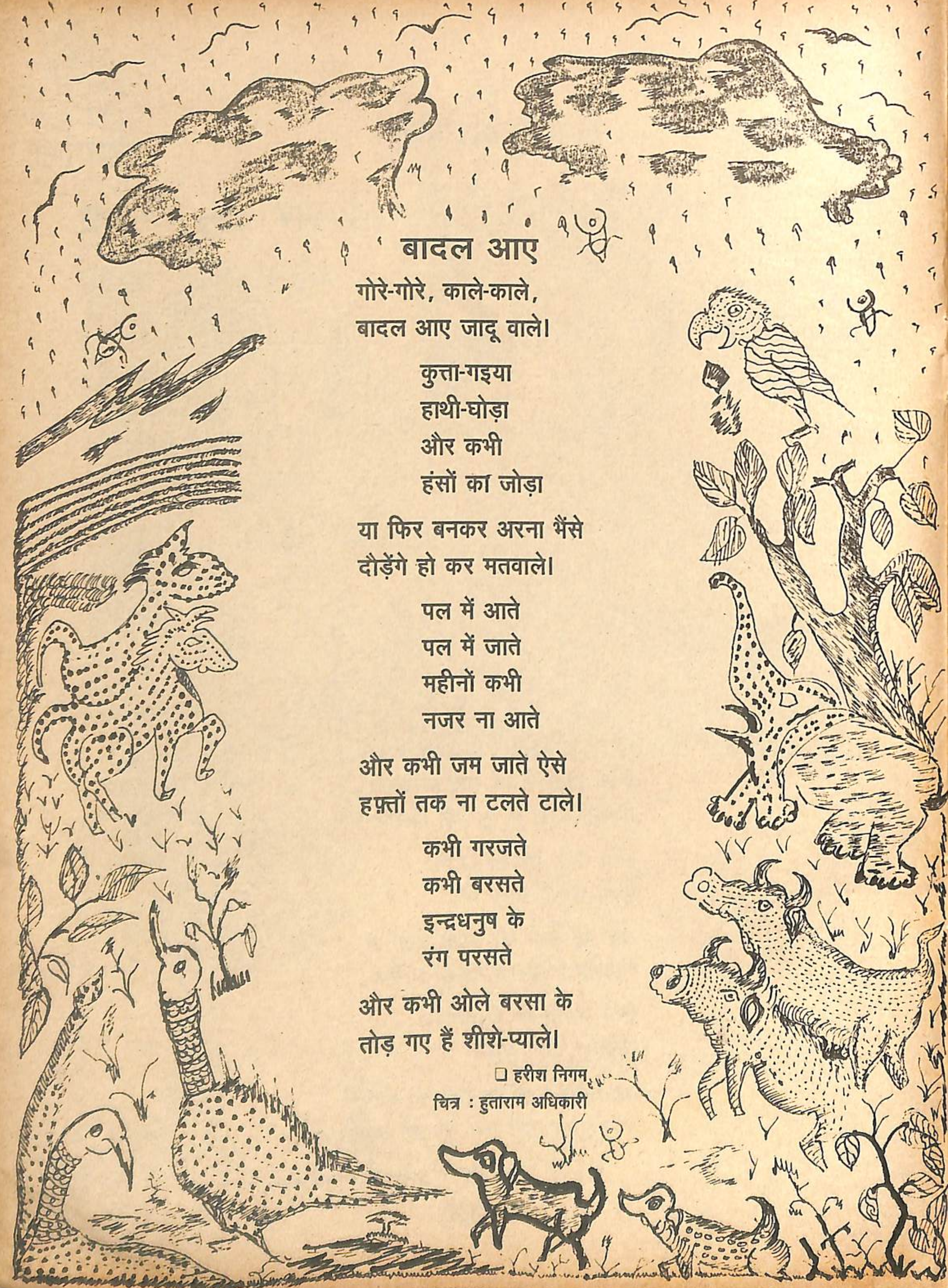
सोने जैसी उजली जाली
फूली सरसों पीली पीली

लद गई आम की डाली फलों से
लहलहाती पालक मेंहकी धनिया

ऐसा लगता कि धरती पर
आकाश उतर आया

तट की रेत पर तरबूजों की खेती
गाँव लगता हरा भरा मन को लगता प्यारा।

❑ अजय शुक्ला, सुखतवा, होशंगाबाद, म.प्र.



बादल आए

गोरे-गोरे, काले-काले,
बादल आए जादू वाले।

कुत्ता-गइया
हाथी-घोड़ा
और कभी
हंसों का जोड़ा

या फिर बनकर अरना भैंसे
दौड़ेंगे हो कर मतवाले।

पल में आते
पल में जाते
महीनों कभी
नजर ना आते

और कभी जम जाते ऐसे
हफ़्तों तक ना टलते टाले।

कभी गरजते
कभी बरसते
इन्द्रधनुष के
रंग परसते

और कभी ओले बरसा के
तोड़ गए हैं शीशे-प्याले।

❑ हरीश निगम
चित्र : हुताराम अधिकारी

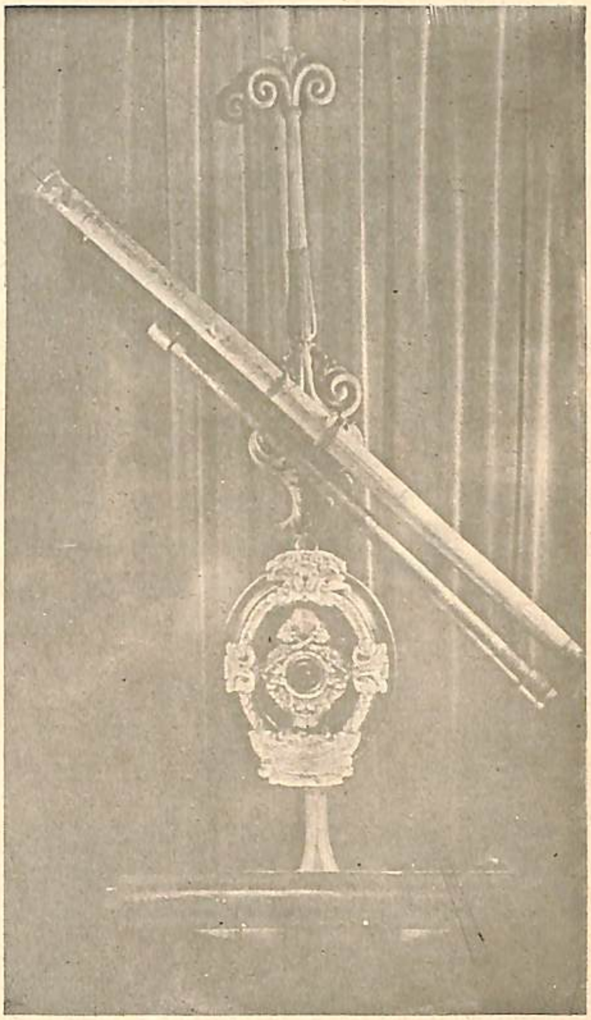
♀ शुक्र पर जीवन की खोज

❑ दुलदुल विश्वास

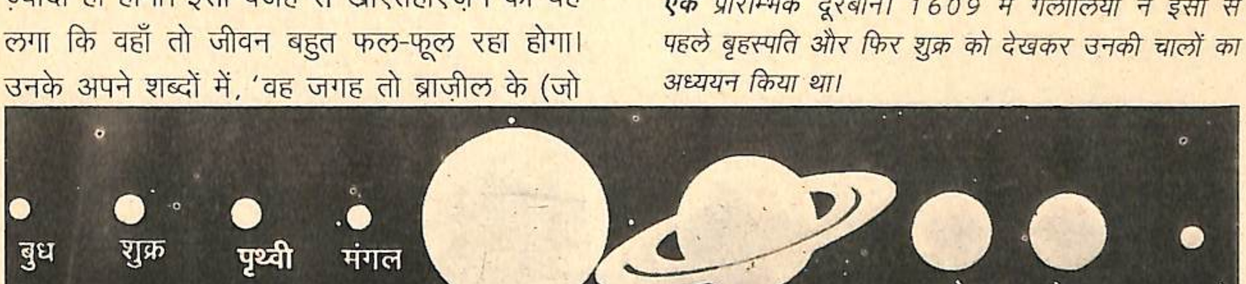
बात है तो बहुत पुरानी, पर है सच्ची। आज से कोई 170-175 साल पहले जर्मनी के म्युनिख़ शहर में एक साहब रहते थे - फ्रांज़ वॉन पौला ख्रॉएतहॉएज़ेन। वे पेशे से खगोलशास्त्री थे और उन दिनों इस अध्ययन में लगे थे कि हमारी पृथ्वी के अलावा अन्तरिक्ष में और कहीं जीवन है या नहीं। जीवन यानी सिर्फ़ जीव नहीं, उनकी खोज बुद्धिमान जीवित प्राणियों की थी।

अपने इस अध्ययन के दौरान ख्रॉएतहॉएज़ेन ने बहुत ज़ोर-शोर से यह ऐलान किया कि उन्हें चन्द्रमा पर जीवन के संकेत मिले हैं। उन्होंने यह बात अपनी दूरबीन से चन्द्रमा के अवलोकनों के आधार पर कही थी। उन्हें चन्द्रमा पर एक के अन्दर एक बनी कुछ क़िलेनुमा दीवारें दिखी थीं। बाद में एक अन्य खगोलशास्त्री ने उनकी बात को ग़लत साबित कर दिया। ये क़िलेनुमा दीवारें वास्तव में किसी ऊबड़-खाबड़ पहाड़ की श्रृंखलाएँ निकलीं।

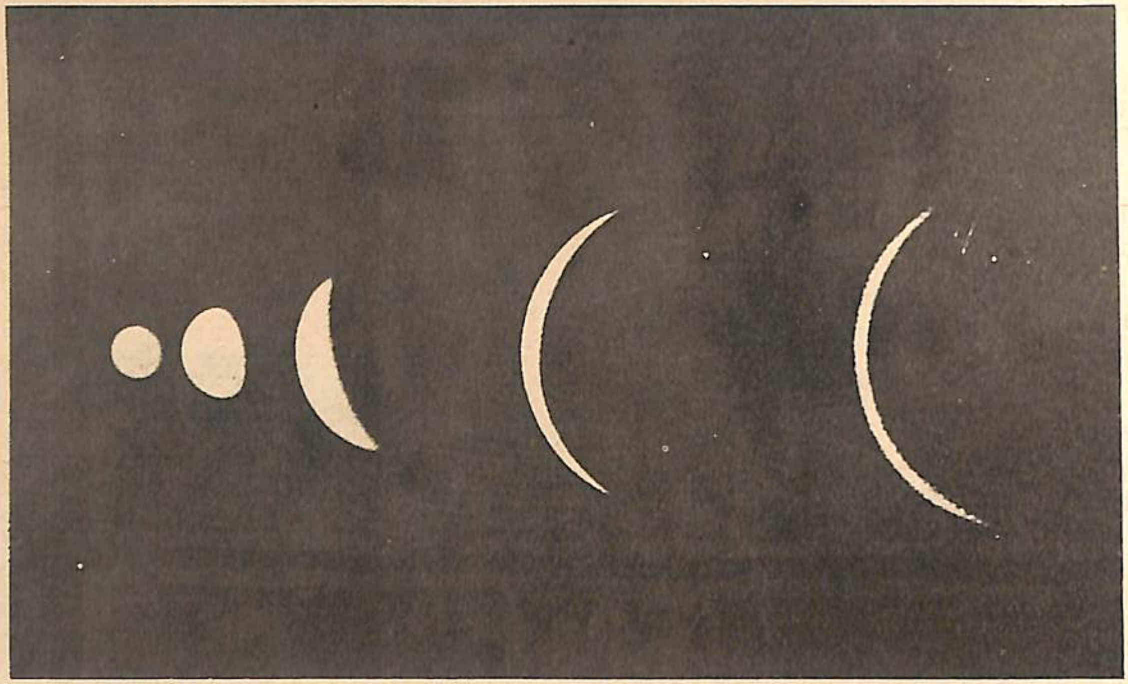
पर फिर कुछ दिनों बाद ही ख्रॉएतहॉएज़ेन को शुक्र ग्रह पर जीवन होने की सम्भावना नज़र आने लगी। उस ज़माने में भी खगोलशास्त्रियों को इतना तो पता ही था कि शुक्र ग्रह भार और नाप-जोख की दृष्टि से पृथ्वी के लगभग समान ही है। जैसे वह पृथ्वी का जुड़वाँ हो! यह जानकारी भी थी कि शुक्र सौर-मण्डल में पृथ्वी से एक कक्षा अन्दर है। इससे ज़ाहिर है, शुक्र ग्रह का तापमान पृथ्वी से कुछ ज़्यादा ही होगा। इसी वजह से ख्रॉएतहॉएज़ेन को यह लगा कि वहाँ तो जीवन बहुत फल-फूल रहा होगा। उनके अपने शब्दों में, 'वह जगह तो ब्राज़ील के (जो एक गर्म देश है) सुन्दर घने जंगलों से भी कहीं ज़्यादा हरी-भरी होगी।'



एक प्रारम्भिक दूरबीन। 1609 में गैलीलियो ने इसी से पहले बृहस्पति और फिर शुक्र को देखकर उनकी चालों का अध्ययन किया था।



विभिन्न ग्रहों का तुलनात्मक आकार। (ऊपर लेख के शीर्षक के साथ शुक्र ग्रह का संकेत चित्र)



शुक्र की विभिन्न कलाएँ। सूर्य के पीछे से निकलकर पृथ्वी की ओर आते समय शुक्र ये कलाएँ दिखाता है। ये चित्र अलग-अलग समय पर खींचे गए हैं।

सदियों से शुक्र ग्रह लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। इसका कारण कुछ हद तक शायद यही रहा होगा कि शुक्र के बारे में हमारे पास बहुत लम्बे समय तक कोई स्पष्ट जानकारी नहीं थी। दरअसल अच्छी से अच्छी दूरबीन के ज़रिए देखने पर भी शुक्र की सतह पर कुछ अस्पष्ट-से धब्बे ही दिखते हैं। कुछ धब्बे बहुत उजले-से और कुछ बहुत धुँधले। बहुत-कुछ बादलों से ढका दिखता है यह ग्रह।

शुक्र में एक और अनोखी बात है। जब कभी यह पृथ्वी और सूर्य के बीच-एक सीधी रेखा में आ जाता है, तो उसका सूर्य की ओर वाला हिस्सा सूर्य के प्रकाश से जगमगा उठता है, लेकिन जो हिस्सा पृथ्वी यानी हमारी ओर होता है, वह अन्धेरे में डूबा रहता है। यानी शुक्र पर सूर्य की ओर के हिस्से में दिन और पृथ्वी की ओर के हिस्से में रात होती है। पर कई सालों के अन्तराल से एक अनोखी घटना शुक्र के साथ घटती दिखाई देती है। वह यह कि कभी-कभी उसके वे हिस्से भी पूरी तरह से काले या अन्धकारमय नहीं दिखते जिनमें रात होती है। रात वाले इस हिस्से में भी एक हल्की रोशनी दिखाई पड़ती है। इस घटना की तुलना हम पृथ्वी की किसी पूर्णिमा की रात से कर सकते हैं जब चाँदनी फैली होती है। ऐसी किसी रात को अगर अन्तरिक्ष से कोई पृथ्वी को देखे तो उसे पृथ्वी के रात वाले हिस्से में भी हल्का-सा प्रकाश दिखेगा।

बिलकुल शुरुआती खगोलशास्त्रियों ने तो शुक्र की इस रोशनी को शुक्र के चाँद (यानी उपग्रह) से परावर्तित सूर्य का प्रकाश बताया था। पर ख्वॉएतहॉएज़ेन के ज़माने तक यह जानकारी भी आम हो गई थी कि शुक्र का कोई उपग्रह नहीं है।

सो अब शुक्र की इस अनोखी रात की अनोखी रोशनी का कोई नया कारण ढूँढना था। और यहीं ख्वॉएतहॉएज़ेन के लिए फिर एक मौक़ा था। उन्होंने खगोलशास्त्रिय इतिहास का अध्ययन किया और यह पाया कि इस धुँधली-हल्की रोशनी के बारे में पहला ज़िक्र सन् 1759 में हुआ था, जो मेयर नाम के किसी व्यक्ति ने किया था। और दूसरी बार इसका ज़िक्र सन् 1806 में हार्डिंग ने किया था। यानी पृथ्वी की समय गणना के अनुसार दो बार इस रोशनी के दिखाई पड़ने के बीच 47 सालों का फ़ासला था।

अब ज़रा इसे शुक्र ग्रह के समय की गणना के हिसाब से देखें। शुक्र चूँकि पृथ्वी की तुलना में

सूर्य के क़रीब है, इसलिए उसकी कक्षा की गोलाई कम है। और इसलिए उसे सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने में कम समय लगता है - सिर्फ़ 225 दिन। यानी शुक्र का एक साल सिर्फ़ 225 दिनों का होता है। तो अगर पृथ्वी के 47 सालों (365 दिन वाले) को शुक्र के सालों में बदलें तो हमें शुक्र के 76 साल मिलते हैं। यानी पृथ्वी से शुक्र की धुँधली रोशनी के दो बार दिखाई पड़ने के बीच शुक्र के 76 सालों का फ़ासला था।

खॉएतहॉएज़ेन ने इस आँकड़े के पीछे धार्मिक कारणों के होने को तो नकार दिया। उनका यह नकारना शायद उस ज़माने में काफी प्रगतिशील विचार रहा होगा। पर उसकी जगह जनाब ने एक और मज़ेदार कारण ढूँढ निकाला। उनका कहना था कि किसी भी ग्रह पर दो शासकों के शासन काल के बीच लगभग 76 वर्षों का अन्तराल तो हो ही सकता है। अगर किसी शुक्र निवासी की औसत उम्र 130 शुक्र वर्ष हो (80 पृथ्वी वर्ष) तो 76 साल में एक बार सत्ता परिवर्तन भी हो सकता है। तो 1759 और 1806 में शुक्र पर देखे गए प्रकाश ज़रूर किसी नए शासक के अभिषेक में मनाए जाने वाले जश्न की रोशनी रही होगी। मज़ाक नहीं! दस्तावेज़ बताते हैं कि खॉएतहॉएज़ेन की कल्पना ने वाकई इतनी ऊँची उड़ान भरी थी! पर बाद में उन्हें अपनी ही कल्पनाओं से घबराहट होने लगीं होगी। क्योंकि बाद में उन्होंने अपने कथन को बदलकर यह कहा था कि, 'ये धुँधली रोशनी शायद शुक्र पर बढ़ती जनसंख्या के लिए खेती योग्य ज़मीन जुगाड़ने के लिए जलाए जाने वाले जंगलों के कारण हो!'

इस ग्रह को, जिसने खगोलशास्त्रिय इतिहास में इतने मज़ेदार किस्से जोड़े, क्या तुम भी देखना चाहोगे? इसे काफ़ी आसानी से नंगी आँखों से देखा जा सकता है। पृथ्वी से ख़ाली आँखों से देखने पर यह किसी तारे-सा ही दिखता है। फ़र्क सिर्फ़ इतना होता है कि यह दूसरे तारों से कहीं ज़्यादा उज्ज्वल और चमकदार होता है। इसे देखने के लिए शाम को सूरज डूबने के लगभग आधे घण्टे बाद घर से बाहर जाकर पश्चिमी आकाश की ओर देखो। शायद वहाँ तुम्हें एक ऐसा तारा दिखे जो दूसरे तारों के दिखाई देने से पहले ही, हल्की रोशनी में चमकने लगता है। अगर तुम उसे ढूँढ पाओ तो हर 30 मिनट बाद उसकी स्थिति देखो, 4-5 घण्टे तक। तुम्हें दिखेगा कि वह सूर्य का पीछा करता हुआ धीरे-धीरे पश्चिम में नीचे उतरता हुआ डूब जाएगा। यही तारा, तारा नहीं शुक्र ग्रह है।

अगर शाम के समय पश्चिमी आकाश में तुम इसे नहीं देख पाए हो, तो सूर्योदय से आधे घण्टे पहले ही उठ जाओ। खुद न उठ पाओ तो



***शाम** के हल्के धुँधलके में खींचा गया एक चित्र। दिखाई दे रहे दो पिण्डों में से नीचे वाला शुक्र है और उसके ऊपर बृहस्पति।*

सूरज डूबा-वीनस निकला

देखो-देखो सूरज डूबा
सूरज ने अंगड़ाई ली
शाम ने अपनी आँखे खोलीं
सुन्दर आकाश में अलग रंग हुए
अलग-अलग रंगों का आकाश
लगता कितना सुन्दर
शाम हुई तो वीनस निकला
शाम हुई तो सूरज डूबा!

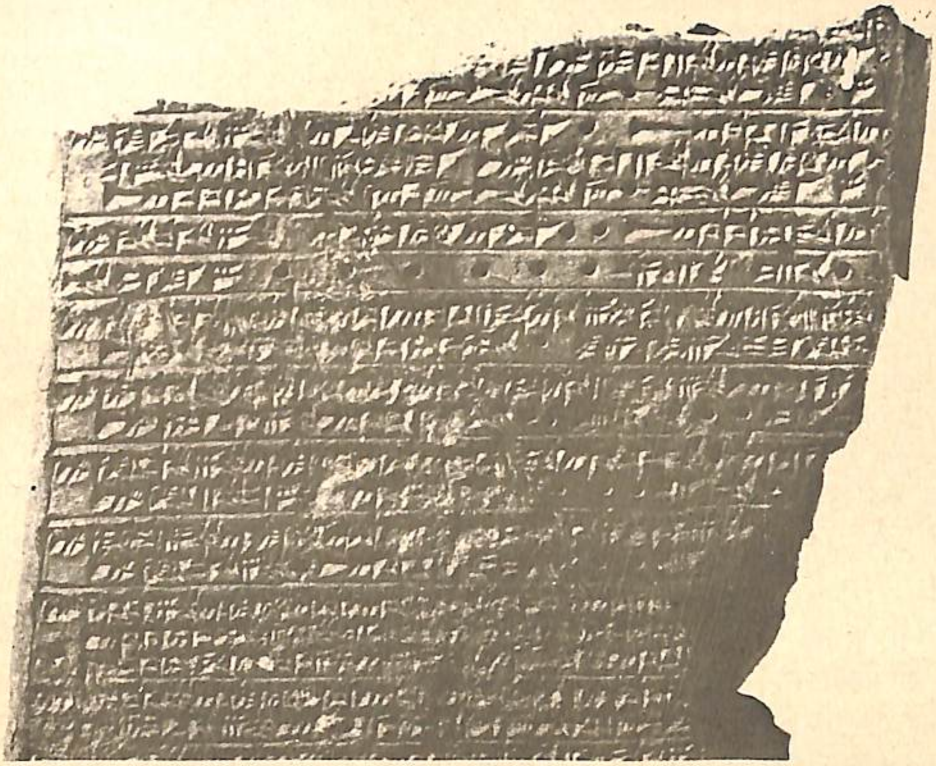
❑ **शुभा आचार्य, सात वर्ष, भोपाल, म.प्र.**

अम्मा-बाबूजी से कहो तुम्हें जल्दी जगा दें। फिर सुबह-सुबह बाहर जाकर पूरब की ओर देखो। हो सकता है तुम्हें सुबह का सबसे उजला तारा वहाँ दिखे।

वैसे अभी तो बारिश का मौसम है। हो सकता है आसमान बादलों से लदा हो और तुम्हें ग्रह दिखाई न दे। यूँ भी शुक्र साल के पूरे समय दिखाई नहीं देता। और जब दिखता है तो लगातार या तो



चौथी और आठवीं शताब्दी के बीच बना एक दस्तावेज। इसमें मध्य अमरीकी माया जनजाति के लोगों द्वारा की गई शुक्र और सूर्य की चालों की गणनाएँ दर्ज हैं। इसमें ऊपर के दो चित्र (बाँए-दाँए) आकाश देवताओं के हैं। बीच के दो चित्र नाराज़ देवताओं के हैं जो सूर्य या शुक्र को मारने वाले हैं। नीचे के दोनों मरे हुए सूर्य (जब ग्रहण लगता है) या शुक्र (जब पृथ्वी से दिखाई नहीं देता) के हैं।



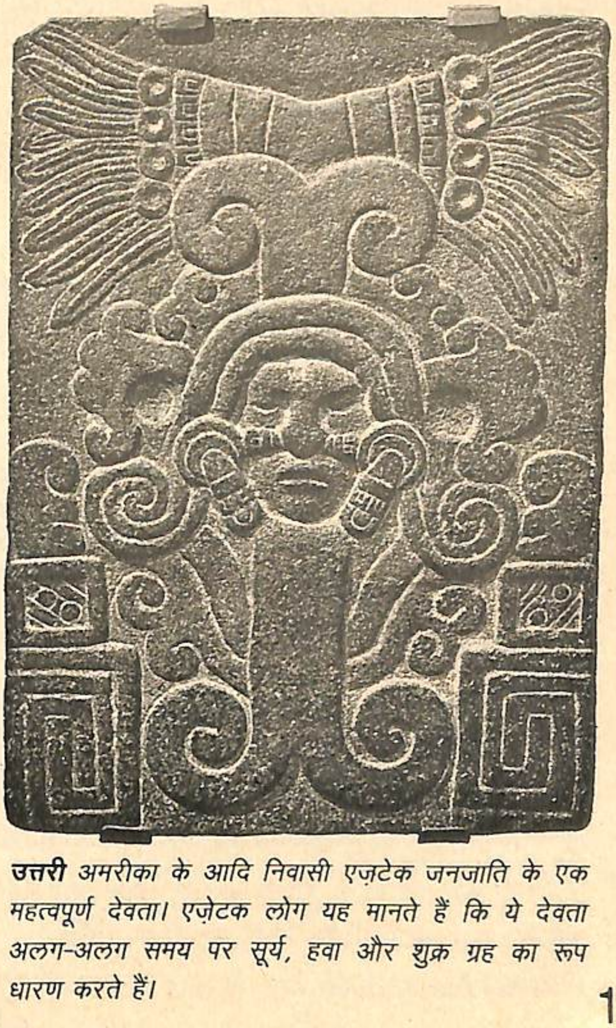
चार *हज़ार साल पुरानी मिट्टी की एक पट्टिका। उन्नीसवीं शताब्दी में यह बेबीलॉन में खुदाई के दौरान मिली। इसमें वहाँ की लिपि में शुक्र ग्रह की चाल और उसके आधार पर की गई गणनाएँ लिखी हैं।*

साँझ को पश्चिमी आकाश में या फिर सुबह के समय पूरब की ओर।

शुक्र ग्रह हमेशा से बहुत आकर्षक रहा है। है भी यह सुन्दर। इसकी रोशनी कोमल और उज्ज्वल है - एकदम झक सफ़ेद। इसकी चमक की तुलना में न कोई दूसरा तारा टिक पाता है न ग्रह। सूरज और चाँद के बाद हम पृथ्वीवासियों के लिए आसमान का सबसे उजला पिण्ड भी यही है। बहुत पुराने समय में रोमवासियों ने इसकी सुन्दरता से प्रभावित होकर इसे अपनी सौन्दर्य की देवी के सम्मान में 'वीनस' का नाम दिया था। अंग्रेज़ी में शुक्र का आज यही नाम प्रचलित है।

मध्य अमरीका के आदि निवासी माया जनजाति के लोगों ने भी अपने समय की गणना करने में शुक्र की चाल की मदद ली थी। वहाँ सन् 400 से 800 के बीच सूर्य के साथ ही शुक्र ग्रह की चाल को पहचानकर, नापकर साल भर की खेती का कार्यक्रम तय किया जाता था।

यूँ तो आज से लगभग 4000 साल पहले ही बेबीलॉन (आज के इराक का एक हिस्सा) के निवासियों ने भी शुक्र की चाल को पहचान और नाप लिया था। वे भी इसकी मदद से अपने कैलेण्डर



उत्तरी *अमरीका के आदि निवासी एज़टेक जनजाति के एक महत्वपूर्ण देवता। एज़ेटक लोग यह मानते हैं कि ये देवता अलग-अलग समय पर सूर्य, हवा और शुक्र ग्रह का रूप धारण करते हैं।*

बनाते थे। परन्तु लगभग 500 ई.पू. तक लोग सुबह के उज्ज्वल तारे और शाम के उज्ज्वल तारे को अलग-अलग आकाशीय पिण्ड मानते रहे थे। सन् 500 ई.पू. में ही पाइथागोरस नामक यूनानी गणितज्ञ ने यह पता लगाया था कि ये दोनों तारे अलग-अलग पिण्ड नहीं हैं, बल्कि एक ही ग्रह है। ये वही पाइथागोरस हैं जिनका प्रमेय तुममें से कुछ ने रेखागणित में पढ़ा होगा।

चलते-चलते, जोड़-तोड़ करते हुए खॉएतहॉएज़ेन का ज़माना आया। खॉएतहॉएज़ेन की खोज से प्रेरणा लेकर कुछ खगोलशास्त्रियों और वैज्ञानिकों ने यह सोचना शुरू किया कि किस तरह से हम पृथ्वीवासी शुक्रवासियों से सम्पर्क करें, सूचना भेजें। यह तो समझ आ ही गया था कि अगर शुक्र में कोई प्राणी हो तो उनसे सम्पर्क करने में भाषा आड़े आएगी। पर वैज्ञानिकों का मानना था कि अगर वे प्राणी भी हमारी तरह बुद्धिमान हुए तो उन्हें गणित के सरल संकेतों जैसे वृत, त्रिभुज, चौरस आदि से कुछ तो समझ आएगा। इतना तो वे अंदाज़ लगा ही पाएँगे कि गणित जानने वाले प्राणी पृथ्वी पर हैं। अब समस्या यह थी कि इन संकेतों को उन शुक्रवासियों या अन्य किसी भी ग्रहवासियों तक पहुँचाया कैसे जाए। इसके लिए एक विशाल ब्लैकबोर्ड दरकार था जिस पर इतने बड़े चित्र बनाए जा सकें जो दूर बसे अन्य ग्रहवासी भी पढ़ सकें। समस्या बड़ी थी। पर इन्सान कहाँ हार मानता है। ब्लैकबोर्ड के लिए साइबेरियाई बर्फ़ के मैदानों (टुन्ड्रा) को चुना गया। यह तय हुआ कि टुन्ड्रा के बर्फ़ीले मैदानों में पाइथागोरस प्रमेय का संकेत () बनाया जाए। बाहरी सीमारेखा के लिए गाढ़े हरे रंग के पत्तों वाले पाइन के वृक्ष लगाए जाएँ और बीच के क्षेत्र में गेहूँ या कोई और अनाज के पौधे रोपे जाएँ जिनमें सफ़ेद या हल्के रंग की बालियाँ आएँगी।

अब तुम में से जिन लोगों ने टुन्ड्रा के बारे में, वहाँ की आबोहवा और वनस्पति के बारे में थोड़ा-बहुत भी पढ़ा होगा वो तो इसे ख़्याली पुलाव या किसी पागलखाने से भाग निकले पागल के विचार समझ रहे होंगे। क्योंकि टुन्ड्रा में तो इतनी ठण्ड पड़ती है कि बर्फ के नीचे की ज़मीन बिल्कुल कठोर और अकड़ी हुई होती है। पेड़-पौधे ठीक से उग ही नहीं पाते। और बर्फ़ीली-तूफानी हवाओं के कारण जो थोड़े-बहुत पेड़ हों वे या तो बहुत ही छोटे क़द के होते हैं या फिर जमीन पर रेंगते हुए उगते हैं। ऐसे में पाईन के ऊँचे-ऊँचे वृक्षों ओर गेहूँ की फ़सल के बारे में तो सोचना भी हास्यास्पद है। पर सच मानो, उस जमाने में अंतरिक्षवासियों से सम्पर्क



एक अन्तरिक्ष यान से लिए गए शुक्र के तीन चित्र। इन्हें एक ही दिन में अलग-अलग समय पर लिया गया है। पहला चित्र रात के 12:00 बजे, दूसरा सुबह 7:00 बजे और तीसरा दोपहर 2:00 बजे लिया गया है। चित्र में तीर से बादलों की बदलती स्थिति दिखाई गई है। बादलों की चाल से पता चलता है कि शुक्र पर बादलों की ऊपरी परत में हवा लगभग 400 कि.मी. प्रति घण्टे की गति से चलती है।

स्थापित करने की इतनी लालसा थी लोगों में कि 'गणित के युवराज' कहलाने वाले कार्ल फ्रीडरिक गॉस ने ही यह सुझाव दे डाला था। वैसे उन्होंने यह भी जोड़ दिया था कि, "ये सब पेड़-पौधे कैसे लगाए जाएँ, यह सोचना किसानों और जंगल लगाने वालों का काम है!"

यूरोपवासी यहीं नहीं रुके। ऑस्ट्रिया की राजधानी विएना के मशहूर खगोलशास्त्री लिट्रो को अफ्रीका के सहारा रेगिस्तान में सही आकार का ब्लैकबोर्ड दिख गया। उन्होंने योजना बनाई कि सहारा में बड़ी-बड़ी गणितीय आकृतियाँ बनाई जाएँ, वृत, त्रिभुज आदि। वृत का अर्धव्यास लगभग 32 किलोमीटर लम्बा हो। अन्य आकृतियाँ भी लगभग इतनी ही बड़ी हों। मान लो पहले वृत बनाया जाता है तो उस आकार का एक उथला-सा गड्ढा खोदा जाए, उसमें पानी भरा जाए और पानी के ऊपर मिट्टी का तेल तैरा दिया जाए। तेल इतना हो कि आग लगाने पर करीब 6-7 घण्टे तक जलता रहे। लिट्रो की योजना थी कि एक रात वृत्ताकार आग लगाई जाए, अगली रात चौकोर, और उससे अगली रात त्रिभुजाकार---। लिट्रो का कहना था कि इससे हमारी तरह के बुद्धिमान प्राणी सिर्फ़ हमारे अस्तित्व के बारे में ही नहीं जान पाएँगे बल्कि यह भी समझ जाएँगे कि हम उन्हीं से सम्पर्क स्थापित करने के लिए ऐसा कर रहे हैं। क्योंकि हमें अपने ग्रह के लोगों को सिखाने-पढ़ाने के लिए इतनी बड़ी आकृतियों की ज़रूरत तो नहीं पड़ती है।

और यों सपने बुनते, खोज करते, सपनों पर पानी भी फिराते बीसवीं सदी आ पहुँची। तब तक भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र में बहुत-सी क्रांतिकारी खोज और शोध हो चुके थे। किसी चीज़ की रासायनिक और भौतिक जानकारी इकट्ठी करने के ढेरों तरीक़े थे हमारे पास। तो जब वैज्ञानिकों को पता चला कि शुक्र ग्रह पर तापमान बहुत ही अधिक है तो 1918 में स्वीडन के मशहूर रसायनज्ञ अरहेनियस ने सुझाया कि शायद शुक्र पर छाए बादलों में भी पानी या भाप हो। पृथ्वी के ऊपर छाए बादलों की तरह ही। और नीचे उसकी सतह पर दलदली जमीन में घने जंगल होंगे।

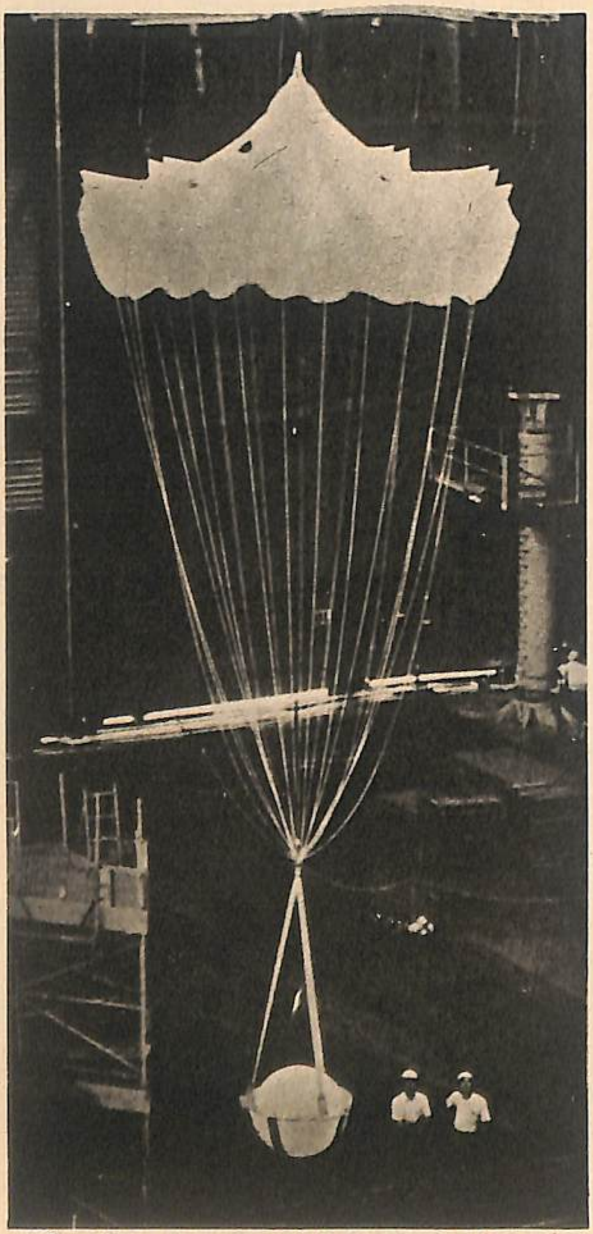
अब चूँकि शुक्र का तापमान तब तक औसतन 120°F (49° C) के आसपास आँका गया था इसलिए वहाँ पेड़-पौधे, हरियाली खूब होगी। यह बात कुछ-कुछ ख्रॉएतहॉएजेन की बात से मिलती भी थी। पर अगर कहीं पर भी पेड़-पौधे बहुत तेज गति से उगते हों तो वे मरते भी जल्दी-जल्दी हैं। अरहेनियस के अनुसार इन तेज रफ्तार से मरने वाले पेड़-पौधों के कारण शुक्र की सतह पर बहुत घनी गैस फैली रहती होगी। और दलदल के नीचे बड़े-बड़े क़ोयले के क्षेत्र होंगे - पेड़ों के दबने-झुलसने से बने कोयले। अरहेनियस ने पशु-पक्षी-मनुष्यों की ज्यादा बात नहीं की। सिर्फ़ इतनी ही सम्भावना जाहिर की, कि अगर ऐसा विकसित जीवन हो तो वह शुक्र के ध्रुवों पर होगा, गर्म मध्य रेखा पर नहीं।

पर 1922 आते ही वैज्ञानिकों ने अरहेनियस के "गीले शुक्र" सिद्धान्त का विरोध करना शुरू कर दिया दो अमरीकी खगोलशास्त्रियों चार्ल्स सेंट जॉन और सी.बी. निकॉलसन ने बहुत कठिनाई के बावजूद कई अध्ययन करके शुक्र के वातावरण में न के बराबर पानी और ऑक्सीजन पाया। तब उन्होंने सुझाया कि वहाँ सिर्फ हवादार रेगिस्तान ही होंगे। शुक्र पर छाए बादलों को भी उन्होंने हवा से उड़ाए गए धूलकण, रेतकण आदि से बना बताया।

जॉन और निकॉलसन ने शुक्र के बारे में अपने सुझावों तक पहुँचने में एक बात का सिर्फ़ अनुमान लगाया था। उन्होंने यह मान लिया था कि शुक्र के वातावरण में पानी (भाप) या ऑक्सीजन की कमी को कार्बन-डाइ-ऑक्साइड पूरा करती होगी। उनका यह अनुमान पूरे 10 साल बाद 1932 में सही साबित हो गया। हाँ साथ में यह भी पता चला कि बहुत कम मात्रा में पानी भी शुक्र में मौजूद है - बादलों के ऊपर भी और नीचे भी।

अब तक धीरे-धीरे नए तरीक़ों की मदद से काफ़ी जानकारी मिलती जा रही थी। 1955 आते-आते शुक्र के वातावरण की संरचना के बारे में दो नए मॉडल प्रचलित हो चुके थे। पहले के अनुसार शुक्र की सतह पर कार्बन-डाइ-ऑक्साइड से परिपूर्ण पानी का एक समुन्दर था। यह मॉडल पृथ्वी की संरचना के एक सिद्धान्त पर आधारित

था। पृथ्वी से भी काफ़ी मात्रा में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड निकली है। यह अधिकतर दूसरे पदार्थों से क्रिया करके संगमरमर, चॉक जैसे पत्थरों में बदल गई है। पर ऐसा शुक्र पर क्यों नहीं हुआ? इसका जवाब ढूँढने में खगोलशास्त्रियों ने अनुमान लगाया कि शुक्र की सतह पर खूब पानी होगा - पूरी सतह को ढके हुए। इसलिए ग्रह से निकलने वाली कार्बन-डाइ- ऑक्साइड का दूसरे पदार्थों से सम्पर्क नहीं हो पाता होगा। नतीजतन समूची कार्बन-डाइ-ऑक्साइड सतह पर फैले पानी में ही घुली रहती



अमरीका के एक अन्तरिक्ष अनुसन्धान केन्द्र में पैराशूट की जाँच। यह पैराशूट अन्तरिक्ष यान- पायोनियर वीनस को शुक्र पर उतारने में मदद करता है।

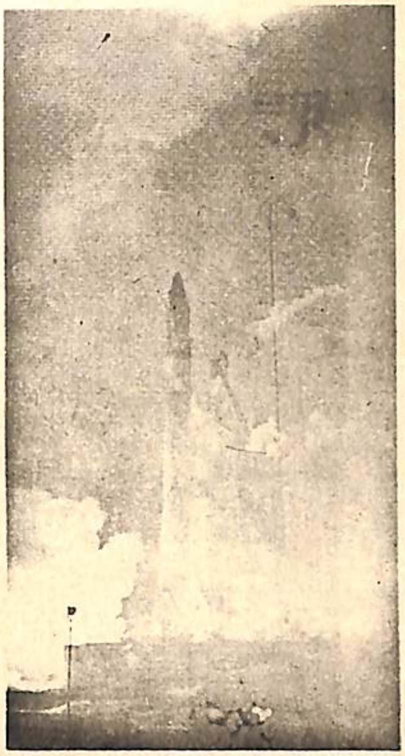
होगी। यानी शुक्र पर बुलबुलेदार कार्बनी समुद्र फैला रहता होगा - समुन्दर न हो जैसे किसी ठण्डे पेय की बोतल हो!

दूसरा मॉडल इस सवाल के जवाब में सुझाया गया था कि कार्बन-डाइ-ऑक्साइड शुक्र के वातावरण में कैसे फैल गई। इसके अनुसार पहले किसी समय में शुक्र पर कुछ पानी और बड़ी मात्रा में तैलीय कार्बनिक रसायन रहे होंगे। कार्बनिक रसायन यानी पेट्रोल, डीज़ल, मिट्टी का तेल आदि पेट्रोलियम पदार्थ। पर सूर्य की पराबैंगनी किरणों ने पानी को हाइड्रोजन और ऑक्सीजन में विभाजित कर दिया होगा। और फिर वहाँ मौजूद कार्बनिक रसायन और ऑक्सीजन के बीच क्रिया से कार्बन-डाई-ऑक्साइड बनी होगी। यानी शुक्र की सतह पर तो पेट्रोलियम तेलों का समुन्दर होगा, वातावरण में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड और बादलों में तेल की बूँदें। चूँकि तब तक शुक्र के बादलों के बारे में कोई विशेष जानकारी हासिल नहीं थी इसलिए यह मॉडल काफ़ी कुछ ठीक-ठाक ही लगता था।

अगले 5-10 सालों में तो अन्तरिक्ष यानों का दौर चल पड़ा था। खोज करने का प्रचलित तरीक़ा था अन्तरिक्ष में अपने-आप चलने वाले स्टेशन छोड़ने का। ये स्टेशन अन्तरिक्ष में पहुँचकर कुछ रेडियो संकेत भी भेजते थे और चित्र भी खींचते थे। और ये चित्र अलग-अलग तरह के होते थे - प्रकाश की अलग-अलग किरणों की मदद से खींचे गए। कभी पराबैंगनी किरणों से तो कभी अवरक्त।

ऐसा पहला स्वचालित अन्तरिक्ष यान वेनेरा-(I) 1961 की फ़रवरी में सोवियत रूस से छोड़ा गया। फिर 1962 के दिसम्बर में अमरीका से मरीनर (II) छोड़ा गया। फिर तो होड़ लग गई शुक्र की ओर अन्तरिक्ष यान भेजने की। इसी दौर में पता चला कि शुक्र ग्रह की सतह पर तो तापमान बहुत ही अधिक है - लगभग 425° सेल्सियस के करीब और उसके ऊपर छाए बादलों का तापमान बहुत ही कम है, लगभग – 40°C।

अक्टूबर 1975 में पहली बार सोवियत वेनेरा - 9 ने शुक्र ग्रह पर क़दम जमाए। उसने वहाँ



1978 में अमरीका के केप कैनवेराल से उड़ता हुआ पायोनियर वीनस।

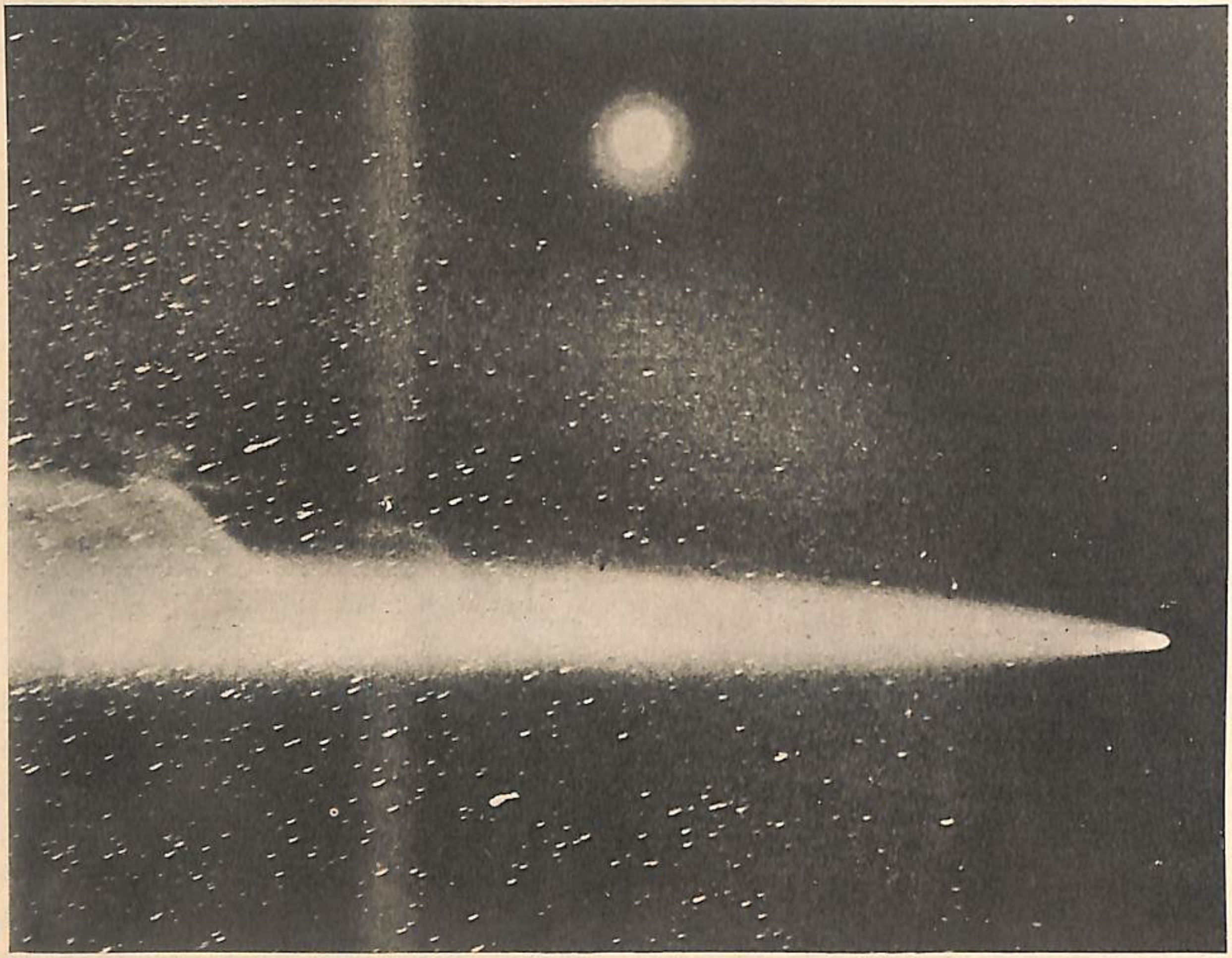
की सतह के कुछ चित्र भेजे जिससे पता चला कि उस इलाके की जमीन तो पथरीली और सख्त थी। पर यह यान वहाँ की गर्मी और दबाव ज्यादा देर तक सह न सका। 53 मिनट तक काम करने के बाद ही वह जलकर ख़ाक़ हो गया।

अब तुम शायद सवाल करो कि आज की तारीख़ में हम शुक्र के बारे में क्या जानते हैं? भई, अभी तो यही मालूम है कि इस ग्रह की अधिकतर सतह सपाट है - लगभग 60%। पर यहाँ काफ़ी बड़े-बड़े गड्ढे और पहाड़ियाँ भी हैं। कुछ पहाड़ियाँ तो हमारे यहाँ के एवरेस्ट से भी ऊँची हैं। कुछ पठार भी हैं अलग-अलग ऊँचाइयों के। शुक्र की जो विषुवत् रेखा है (जिसे हम शायद शुक्रमध्य रेखा भी कहें, यानी वह रेखा जो शुक्र को दो बराबर हिस्सों में बाँटे) उसके पास ही एक जगह बड़ी-बड़ी दरारें भी दिखती हैं। ऐसा लगता है जैसे शुक्र पर भी पृथ्वी की तरह ही भूकम्प आते हैं - या कि उन्हें हम शुक्रकम्प कहें? हाँ, इस बात का कोई अन्दाज़ा अभी तक नहीं लग पाया है कि ये शुक्रकम्प कब आए होंगे।

अब जहाँ तक शुक्र ग्रह की आबोहवा का सवाल है, वह तो बिल्कुल असहनीय होगी। एक वैज्ञानिक ने तो मजाक में कहा था, 'कि जिस भी किसी धार्मिक व्यक्ति ने इतिहास में आग की तरह जलते नरक की कल्पना की थी, उसे ज़रूर शुक्र के मौसम की काफ़ी जानकारी रही होगी।' पर शुक्र में कहीं आग नहीं है क्योंकि जलने के लिए ज़रूरी ऑक्सीजन गैस ही वहाँ से नदारद है। पर गर्मी भयंकर है और वातावरण का स्वाभाविक दबाव पृथ्वी पर महसूस किए गए दबाव से कोई 90 गुना अधिक है। सतह से कोई 48 किलोमीटर की ऊँचाई पर ही बादलों का छाता तन जाता है। और ये बादल गन्धक के अम्ल से भरे होते हैं। अगर



1975 में सोवियत यान से खींचा गया शुक्र का चित्र। यह चित्र यान ने शुक्र पर उतरकर खींचा था। शुक्र की पथरीली सतह चित्र में दिखाई दे रही है।



13, मई 1910 को पृथ्वी से लिया गया हैली के धूमकेतु का एक चित्र। पीछे शुक्र भी मौजूद है। 1910 में यह धूमकेतु पृथ्वी और शुक्र के बीच से गुज़रा था। कुछ साल पहले यही धूमकेतु एक बार फिर पृथ्वी के क़रीब आया था - याद करके बताओ, कब?

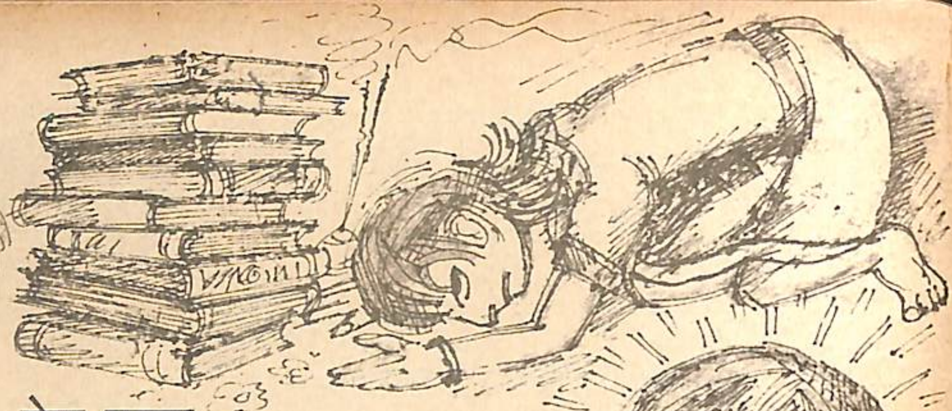
कभी इन बादलों से बारिश गिरे तो बहुत ही सान्द्र गन्धक का अम्ल गिरेगा। पर असल में वहाँ होता यह है कि भीषण गर्मी के कारण बारिश गिरते-गिरते आधे रास्ते में ही सूख जाती है। सतह और बादलों के बीच का वातावरण कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का होता है। कार्बन-डाइ-ऑक्साइड यूँ तो पारदर्शक गैस होती है परन्तु शुक्र ग्रह के वातावरण के प्रचण्ड दबाव के कारण वहाँ इस गैस में बहुत दूर तक दिखाई नहीं देता। अच्छे-से-अच्छे कैमरे भी सिर्फ़ 8-10 किलोमीटर मीलों की दूरी के चित्र ही खींच पाते हैं। शुक्र पर बादलों की सबसे ऊपर की सतह पर तो तेज़ हवाएँ चलती हैं, पर बादलों के नीचे वातावरण एकदम स्थिर रहता है।

बाद के कुछ यानों ने शुक्र ग्रह पर उतर कर जो जानकारी प्राप्त की उससे पता चला कि सौर मण्डल के ज़्यादातर ग्रहों के विपरीत शुक्र अपनी धुरी पर पूरब से पश्चिम की ओर घूमता है। वहाँ पर सूरज पश्चिम से उगकर पूरब में डूबता है। यानी सूरज उगने का मुहावरा वहाँ काम नहीं देगा। यही नहीं, वहाँ दिन और रात कुछ घण्टों के नहीं होते– 4-4 महीने लम्बे होते हैं। अजीब बात है न। जाने कैसे जीते हम अगर शुक्र पर होते तो। कभी दिन में भी सोना पड़ता और सूर्योदय के साथ जागकर काम पर, या स्कूल नहीं जा पाते। और फिर कभी रात में सोकर, रात रहते ही जागकर, रात को ही काम पर जुट जाना पड़ता! 'शुक्र' है कि हम पृथ्वी पर रहते हैं, शुक्र पर नहीं! ❐

इस लेख में आए चित्र द स्काइ, एस्ट्रॉनॉमर, डिस्कवरी एण्ड एक्सप्लोरेशन, स्पेस साइन्स कम्स ऑफ एज और टाइम लाइफ सीरीज़ से साभार लिए गए हैं।


बिंदु
साहू
तुमने मेरे लाख मना करने के बाद भी गरिष्ठ भोजन पकाया।
आप मुझ पर झूठ आरोप लगा रहे हैं। आपने भी तो वह भोजन खाया, क्या वह गरिष्ठ था?
फिर बिंदु इतनी जल्दी सो क्यों गई?
इससे सिद्ध होता है कि आपमें वह पहले वाली बात नहीं रही जब आपकी एक ही फटकार से बच्चों की नींद उड़ जाती थी।
इससे सिद्ध होता है कि दीदी ने उत्तीर्ण होने लायक पढ़ाई कर ली।
छोटू, बेटा, तू अपनी पढ़ाई कर।
इससे सिद्ध होता है कि हमें बच्चों की पढ़ाई में मदद करनी चाहिए। तू छोटू को पढ़ा, मैं बिंदु को देखता हूं।
ठीक है!
Z Z z
z z Z
खर्र..
इससे सिद्ध होता है कि नींद के लिए पाठ्य पुस्तकें अच्छी चीज हैं।







मेरा बस्ता

चार किलो का मेरा बस्ता।
ढोते-ढोते हालत खस्ता।।

इतनी सारी कापी-पुस्तक,
ज्ञान, असीम औ मैं नतमस्तक।
आए दिन देता ही रहता,
बोझिल 'होमवर्क' भी दस्तक।

क्या छोड़ूँ क्या याद करूँ मैं,
होता जाता साहस पस्ता।।

स्कूल दूर है पैदल चलना,
सुविधाओं से हाथ है मलना।
बन्द हो गया दोस्तों के संग,
गप्पें करना और टहलना।

थक जाता तय करते-करते,
स्कूल और घर का मैं रस्ता।।

भारी बहुत है बोझ ज्ञान का,
लोग पूछते मोल म्यान का।
नन्हा जीवन बना है साधन,
अपनों के ही हाय, मान का।

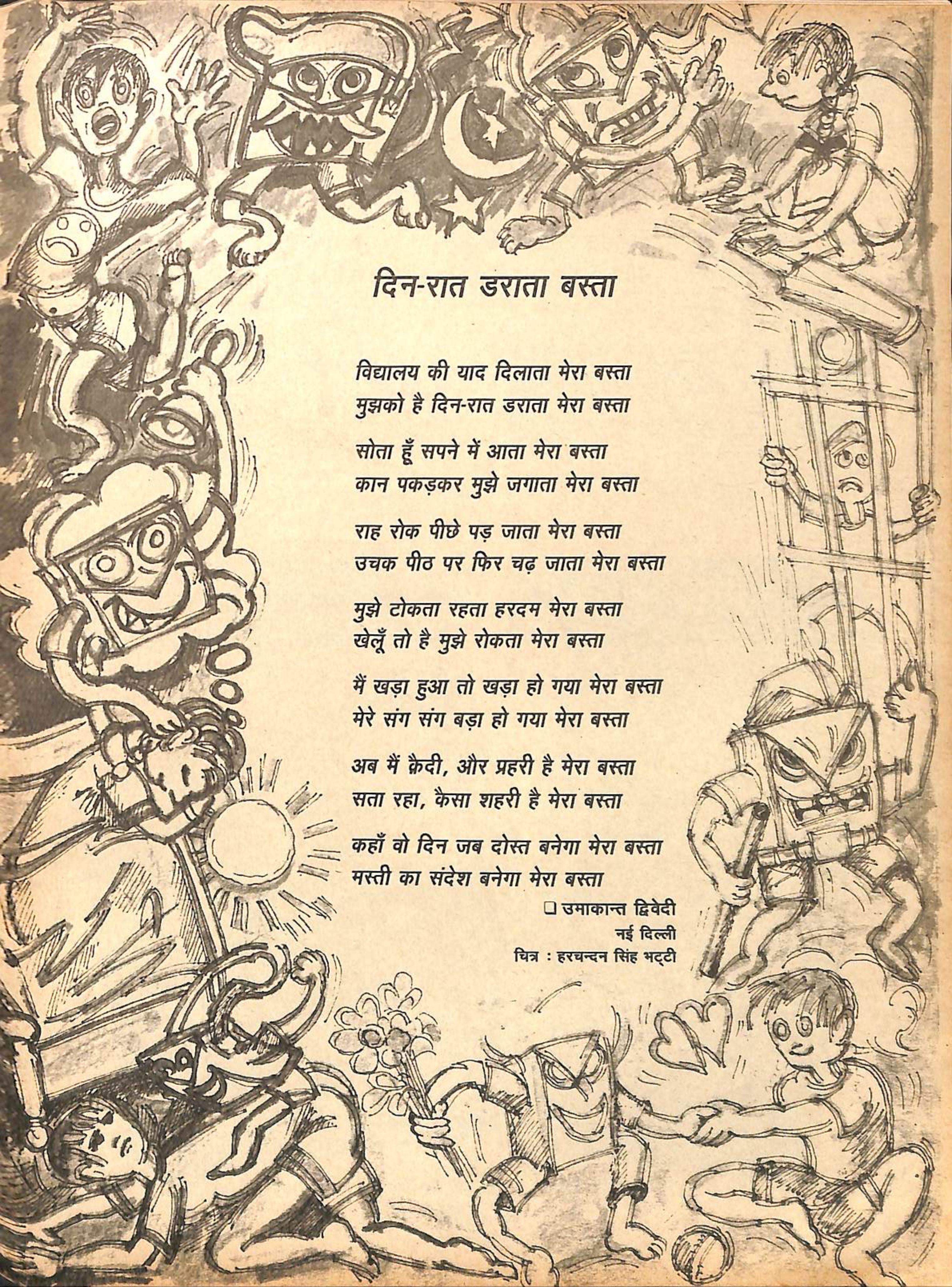
तरस गया मैं लाड़-प्यार को,
अपनों का है साथ न सस्ता।।

❑ जितेन्द्र कुमार तिवारी
बिलासपुर, म.प्र.









दिन-रात डराता बस्ता

विद्यालय की याद दिलाता मेरा बस्ता
मुझको है दिन-रात डराता मेरा बस्ता

सोता हूँ सपने में आता मेरा बस्ता
कान पकड़कर मुझे जगाता मेरा बस्ता

राह रोक पीछे पड़ जाता मेरा बस्ता
उचक पीठ पर फिर चढ़ जाता मेरा बस्ता

मुझे टोकता रहता हरदम मेरा बस्ता
खेलूँ तो है मुझे रोकता मेरा बस्ता

मैं खड़ा हुआ तो खड़ा हो गया मेरा बस्ता
मेरे संग संग बड़ा हो गया मेरा बस्ता

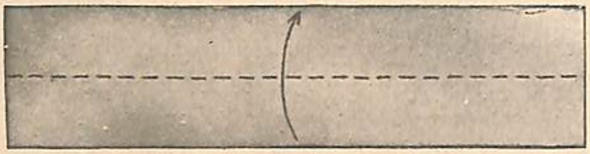
अब मैं क़ैदी, और प्रहरी है मेरा बस्ता
सता रहा, कैसा शहरी है मेरा बस्ता

कहाँ वो दिन जब दोस्त बनेगा मेरा बस्ता
मस्ती का संदेश बनेगा मेरा बस्ता

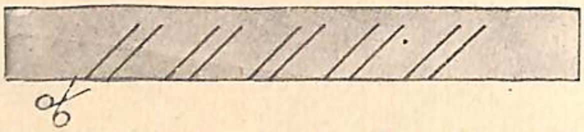
❑ उमाकान्त द्विवेदी
नई दिल्ली
चित्र : हरचन्दन सिंह भट्टी

कार्ड सजाओ

अपनी कॉपी किताबों को सजाने या अपने दोस्तों को कार्ड या उपहार देने के लिए इस तरह की कुछ डिजाइन बनाते हैं। इस में तुम्हें भी मज़ा आएगा और तुम्हारे दोस्तों को भी अच्छा लगेगा। तो चलो शुरू करते हैं।



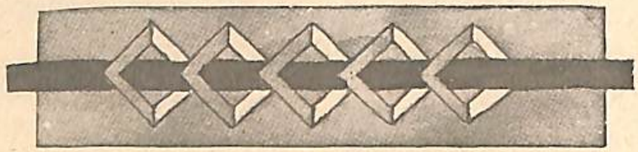
1. एक 4 से.मी. चौड़ाई और 11 से.मी. लम्बाई का कागज लो। टूटी हुई रेखा पर से इसे तीर की दिशा में मोड़ लो।



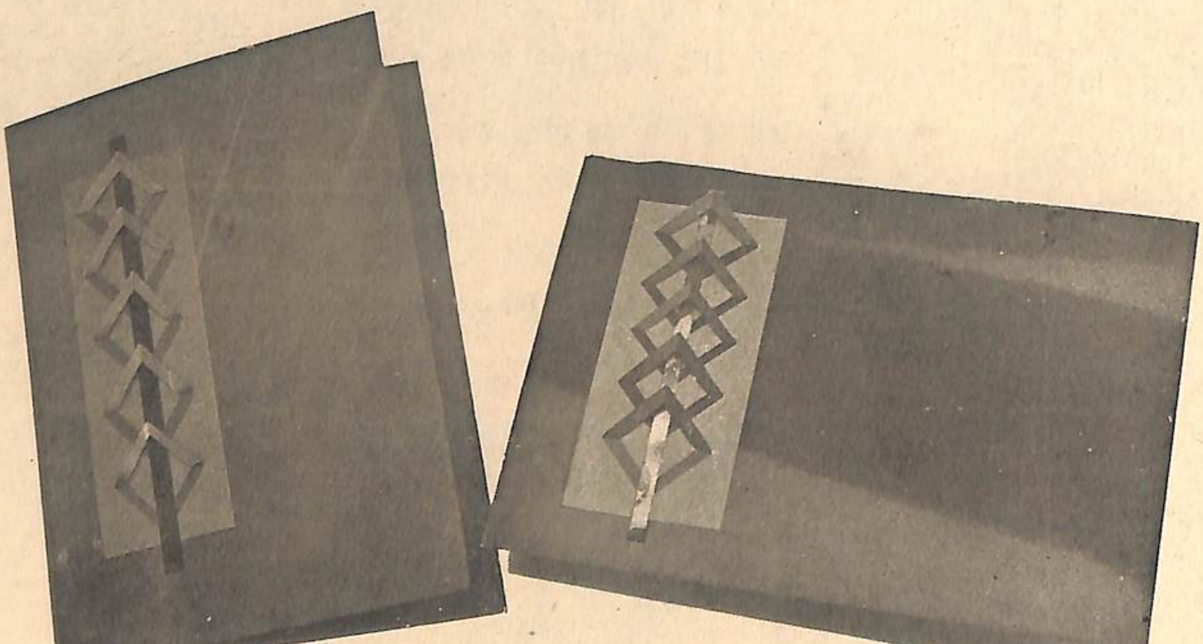
2. बन्द किनार की तरफ से चित्र में दिखाई दे रहे निशानों की तरह निशान बना लो। और कैंची से उन पर कट लगा लो।



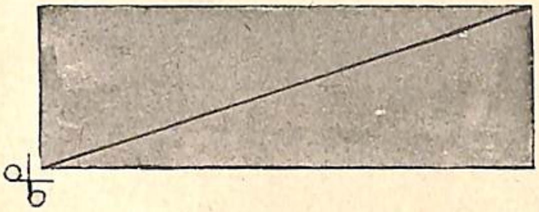
3. कट लगाकर कागज के मोड़ को खोल लो। कटे हुए हिस्सों को ऊपर की तरफ मोड़ लो। इस चित्र जैसी आकृति दिखाई देगी।

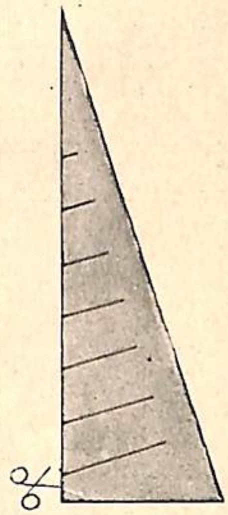


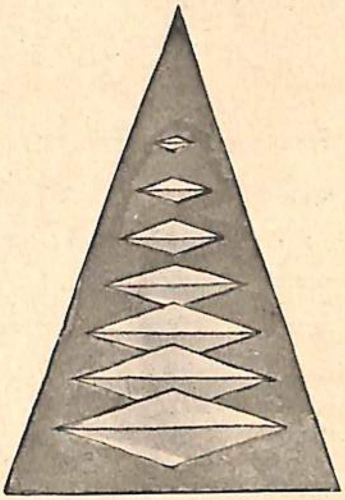
4. अब एक पतली कागज़ की पट्टी काटो। लगभग 1 से.मी. चौड़ी और 15 से.मी. लम्बी। इस पट्टी को चित्र में दिखाए तरीक़े से कटे हुए व ऊपर को मुड़े हिस्सों के बीच पिरो लो।



5. अब इस डिज़ाइन को एक कार्ड पर चिपका लो। इस तरह।







1. काग़ज़ की एक 8 से.मी. चौड़ी और 12 से.मी. लम्बी पट्टी लो। इसे लम्बाई में दोहरा करके मोड़ लो। अब इस मुड़ी हुई पट्टी को चित्र में दिखाई दे रही कर्ण रेखा पर से काट लो।

2. इस तरह की आकृतियाँ मिलेंगी। तिकोन मुड़ी हुई आकृति में ऐसे निशान बना लो जैसे इस चित्र में दिखाई दे रहे हैं। फिर इन निशानों पर से कट लगा लो।

3. आकृति को खोलो और कटे हुए हिस्सों को ऊपर की ओर मोड़ दो। देखो इस चित्र जैसी आकृति मिली या नहीं।



4. बस इसे कार्ड पर चिपका लो ऊपर की ओर एक सितारा काट कर चिपका दो। सुन्दर कार्ड तैयार हैं। और भी डिज़ाइन बना सकते हो। खुद सोचो और बनाओ।

सेमल

सेमल खूब लम्बी उम्र वाला पेड़ है। कहीं-कहीं तो बरगद और पीपल की तरह हज़ार वर्षों का सेमल भी मिला है। वैसे तो भारत के अधिकाँश भागों में यह पेड़ पाया जाता है। लेकिन अन्दमान में बहुतायत में मिलता है। आमतौर पर नदी-तालाबों के किनारे पर यह पेड़ खूब होता है। ऐसी जगह जहाँ गर्मी पड़ती हो लेकिन जमीन में नमी हो, सेमल के लिए बहुत अच्छी होती है। बहुत ज्यादा गर्मी या बहुत ज्यादा ठण्डे इलाकों में यह पेड़ नहीं होता। भारत के अलावा मलाया द्वीप में भी यह पेड़ मिलता है।





सेमल का तना बिलकुल सीधा होता है। इसकी डालें मोटी और सीधी होती हैं। पूरा का पूरा पेड़ काँटों से भरा होता है। देखने में यह पेड़ बहुत ही सुन्दर होता है। ठण्ड के आख़िरी दिनों में इसके लगभग सारे पत्ते झड़ जाते हैं। और फिर ख़ाली टहनियों पर उभरी हुई कलियाँ दिखाई देने लगती हैं। जल्दी ही कलियाँ खिलकर फूल बनने लगती हैं। बसन्त आते-आते पूरा पेड़ फूलों से भर जाता है। सेमल के फूल बहुत सुन्दर होते हैं। इसमें पाँच पंखुड़ियाँ होती हैं। इनका रंग चमकीला लाल होता है। पंखुड़ियों पर हल्की महीन धारियाँ होती हैं। फूल के बीच में साठ के लगभग पराग भरे पुष्पकेसर होते हैं। जहाँ पराग भरा रहता है वो जगह छोटी, काले रंग की होती है।

सेमल की कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं और हर प्रजाति में फूल भी अलग-अलग रंग के होते हैं। जैसे गहरे लाल, गुलाबी, सुनहरे पीले और सफ़ेद रंग के फूलों वाले सेमल मिलते हैं। सफेद सेमल में फूल छोटे और गुच्छों में खिलते हैं। जबकि लाल रंग के फूल वाले सेमल में फूल गुच्छों में नहीं बल्कि अलग-अलग खिलते हैं। यहाँ दिया चित्र लाल रंग के फूल तथा पेड़ का ही है।

फूल खिलने के बाद फिर नए पत्ते आने लगते हैं। पत्ते चौड़े और लम्बे होते हैं। अप्रैल में इसमें फल लगने लगते हैं। इसका फल पहले तो हरे रंग का और ऊँगली के बराबर होता है फिर इसका रंग भूरा और आकार थोड़ा मोटा हो जाता है। इस समय तक फल रूई के भार से फटने लगते हैं। और जल्दी ही पूरी तरह से फट पड़ते हैं। पेड़ के आसपास ही सारी रूई बिखर जाती है। इस रूई में ही छोटे-छोटे काले बीज होते हैं।

सेमल के पेड़ की लकड़ी हल्की, मुलायम और सफ़ेद रंग की होती है। सेमल की लकड़ी जल्दी ही सड़ जाती है, लेकिन अगर उसे पानी में (या नमक के पानी में) रखा जाए तो अधिक दिनों तक सुरक्षित रहती है। लकड़ी का उपयोग मुख्य

(शेष पृष्ठ 33 पर)

सौम्या का भैया

❑ समीरा स्वर्णकार

''ए फॉर एपल-...''

''ए फॉर एपल-...''

''बी फॉर......

मैडम कहती जाती थीं। सब बच्चे दोहराते जाते थे। पर रोज़ सबसे आगे चट-पट बोलने वाली सौम्या चुपचाप बैठी सोच-विचार कर रही थी-

'आख़िर मेरा भाई आएगा कब? सब कहते हैं सौम्या का भाई आएगा! आएगा! पर कब? गीतू का भैया है तो बस हरदम इतराती रहती है। उसका भैया उसे साइकिल में घुमाने ले जाता है, नई पेन्सिल देता है, दिन भर खेलता है और उसको कहानी भी सुनाता है। जब मेरा भैया आएगा तो गीतू की सब अकड़ ढीली हो जाएगी। मेरा भैया भी मुझे साइकिल में घुमाने ले जाएगा। कहानी सुनाएगा और हम खूब खेलेंगे। सच्ची कित्ता मज़ा आएगा। और भैया के साथ.....।'



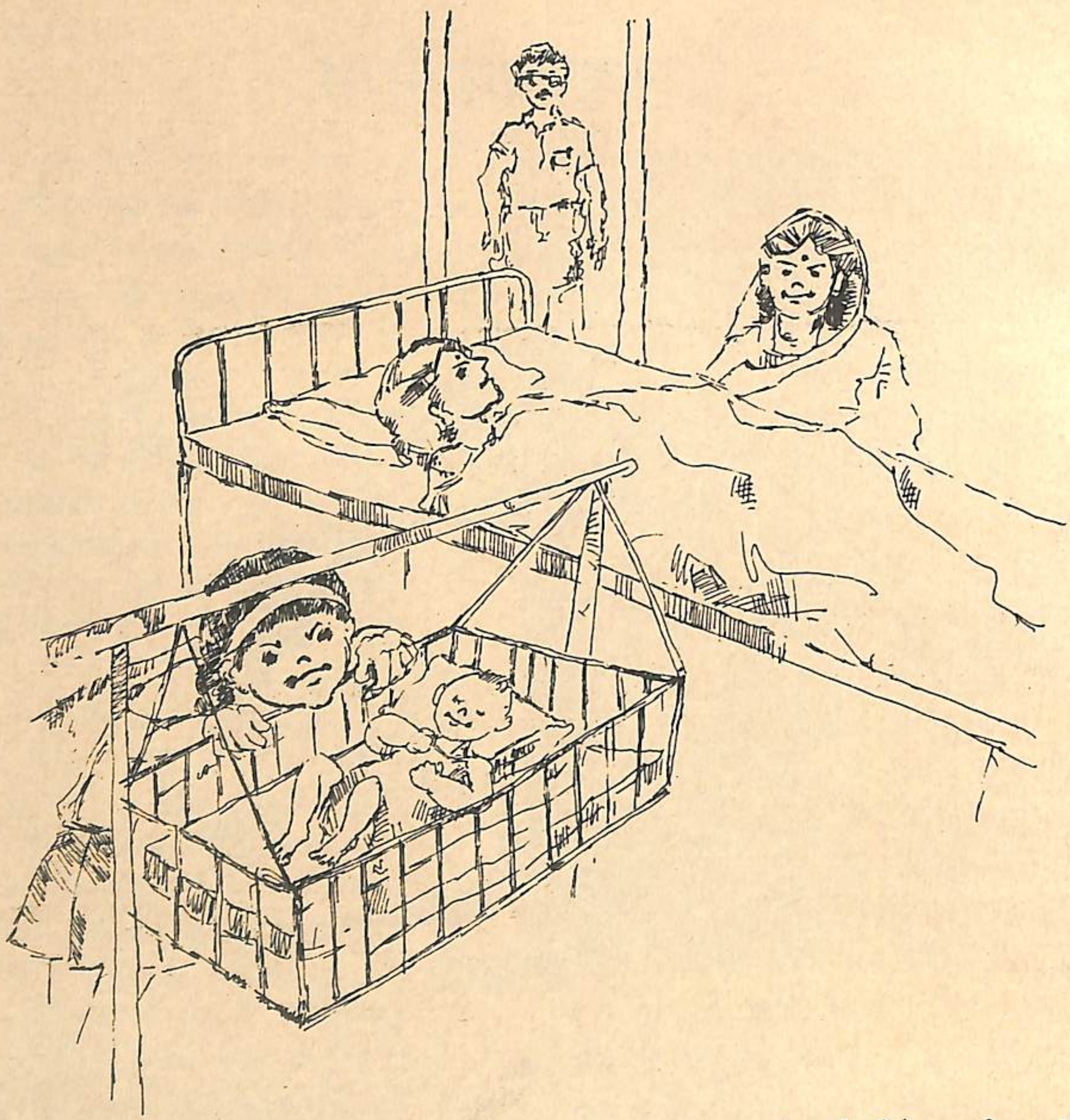
तभी दरवाज़े पर आहट से सौम्या की विचार शृंखला टूट गई। ''पापा आ गए!'' सौम्या के मुँह से निकला।

''मैडम। आज मेरा बेटा हुआ है इसलिए सौम्या को....।'' सौम्या के पापा तो वाक्य पूरा भी न कर पाए थे कि मैडम ने कहा, ''भाई साहब बधाई हो। आप सौम्या को ले जा सकते हैं। मैं खुद प्रिंसिपल से कह दूँगी।''

सौम्या के तो पंख लग आए। उछलती-कूदती कब स्कूल से बाहर आकर स्कूटर में बैठ गई पता ही नहीं चला। पापा ने स्कूटर स्टार्ट किया। ज़ोर का धुआँ निकला और सौम्या को खाँसी आ गई। स्कूटर चल पड़ा और पापा को कसकर पकड़े हुई सौम्या फिर से सोच में डूब गई-

'भैया आ गया। पर पापा कहते हैं भगवान जी भैया भेज देते हैं फिर मम्मी क्यों हॉस्पिटल में हैं। पूरे दो दिन से वह दुष्ट नर्स मम्मी को कित्ते सारे इन्जेक्शन लगा चुकी है।'

अगले मोड़ पर स्कूटर मुड़ गया और



सौम्या की विचार श्रृंखला ने भी दूसरा मोड़ लिया- 'भैया मेरा होमवर्क करा दिया करेगा। वैसे ही जैसे गीतू के भैया करा देते हैं। भैया से कभी-कभी लड़ाई भी कर लिया करूँगी तो वो मनाने के लिए बिस्किट जरूर देगा। जैसे पापा देते हैं। सच्ची कित्ता मजा आएगा।' सौम्या अब सड़क की ओर देखने लगी। आम का पेड़ आया फिर दवाई की दुकान, मोची का ठेला और अब अस्पताल भी आ गया।

स्कूटर रुकते ही सौम्या ने दौड़ लगा दी। पहले एक नर्स से टकराई फिर एक बूढ़े से। फिर बड़बड़ाती हुई सीधे अपनी मम्मी के कमरे में पहुँची। मम्मी तो रोज की तरह चुपचाप लेटी थी। 'उनका चेहरा कितना दुबला हो गया है।' सौम्या ने सोचा। फिर अगले ही क्षण उसने चहक कर कहा, "मेरा भैया कहाँ है?"

"उधर देखो।" मम्मी के पास बैठी मौसी ने कहा।

उधर तो कोई नहीं था। सौम्या कुछ हैरान-सी सामने दिख रहे पालने के पास पहुँची। पंजे के बल उचक कर उसने पालने

में झाँका। अन्दर नन्हा शिशु किसी राजा-महाराजा-सी गहरी नींद में सो रहा था। उसकी मुट्ठी बन्द थी और गाल गुलाबी। सौम्या हैरान थी। ''हे भगवान! इत्ता सा भैयाऽऽ---?'' सौम्या ने मौसी की ओर प्रश्नवाचक निगाहों से देखते हुए कहा जैसे मौसी ने ही गलती से उसे वह नन्हा शिशु दिखाया हो।

मम्मी और मौसी हँसने लगे और अब तक दरवाज़े तक आ गए पापा भी हँस रहे थे। सौम्या का तो स्वप्न चूर-चूर हो गया था। उसने तो गीतू के भैया जैसा भाई चाहा था, और यहाँ लेटा था एक नन्हा शिशु। सौम्या की सारी खुशी तिनके-सी उड़ गई और वह निराश हो धम्म से कुर्सी पर बैठ गई। सोचने लगी-

'कैसा भाई है। ये तो चल भी नहीं सकता साइकिल कहाँ से चलाएगा। कहानी भी नहीं सुना सकता और मेरे साथ खेल भी नहीं सकता।'

कुछ ही दिनों में मम्मी सौम्या के नन्हें भाई को लेकर हॉस्पिटल से घर आ गई। सौम्या को यह छोटा-सा भैया बिल्कुल पसन्द नहीं था। वह अक्सर सोचती थी- 'कित्ता गंदा लड़का है। बिस्तर में छिच्छी कर देता है। लार टपकाता रहता है। खुद–से खा-पी नहीं सकता। बोतल से दूध पीता है तो भी इधर-उधर गिराता है। उल्टी कर देता है। छी। कित्ता गन्दा है। पता नहीं क्यों मम्मी उसे गोद में लिए रहती हैं हरदम। पापा भी अब ऑफिस से आकर सीधे उसी गन्दे लड़के के पास चल देते हैं। उनका बुशर्ट गीला कर देता है तो भी उसको गोदी में उठाए रहते हैं।'

सौम्या उदास-सी रहती थी और कुछ-कुछ चिड़चिड़ी हो गई थी। गीतू का भैया जब उसे साइकिल पर स्कूल पहुँचाता तो सौम्या का गुस्सा सातवें आसमान पर पहुँच जाता। घर पर उस नन्हें मेहमान के खिलौने और झुनझुने देख उसे खूब गुस्सा आता। कहाँ उसने होमवर्क करा देने वाले भैया की कल्पना की थी और कहाँ यह हरदम गोदी में चढ़े रहने वाला छोटा-सा बच्चा।

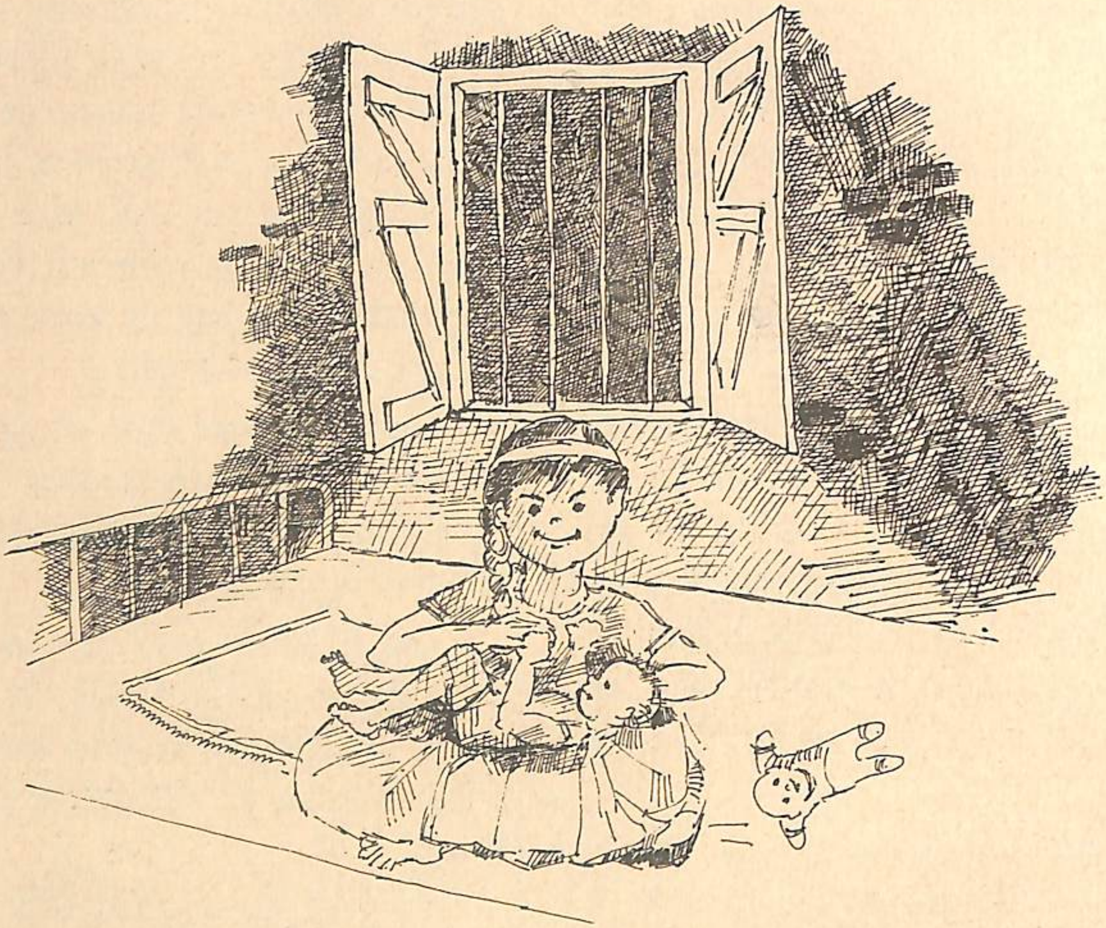
एक दिन जब पापा सौम्या को स्कूटर में बिठाकर बाज़ार जा रहे थे तो सौम्या ने पूछा, ''पापाजी। आप और मम्मी उस गन्दे भैया को क्यों इतना प्यार करते हो?''

पापा ने हँसकर कहा, ''बेटा वह अभी बहुत छोटा है और उसे प्यार की बहुत ज़रूरत है। प्यार करने से ही तो बच्चे बड़े बनते जाते हैं जैसे तुम बड़ी होती जा रही हो। है ना।''

सौम्या को यह बात ठीक लगी। उसने सोचा कि 'अब वह भी गन्दे भैया को प्यार करेगी। प्यार करने से गन्दा भैया जल्दी से बड़ा हो जाएगा।' घर पर जब वह इसी इरादे से नन्हे-मुन्ने के पास पहुँची तो वह जनाब भीगे पड़े थे और पूरी ताक़त से चीख-चीख कर रो रहे थे।

छी भई! इस गन्दे से कोई कैसे प्यार कर सकता है। और रोता भी कित्ते जोर-जोर से है। पता नहीं इत्ते छोटे बच्चे इत्ती जोर-जोर से कैसे रोते हैं। सौम्या ने नाक-भौं सिकोड़ी और थोड़ी देर पहले उमड़ा प्यार पता नहीं कहाँ गुम हो गया।

शाम का समय था। सौम्या अपनी गुड़िया की कंघी कर रही थी। सौम्या की मम्मी पड़ोस वाली चाची के पास गई थीं। और सौम्या का 'गन्दा भैया' चैन की नींद सो रहा था। तभी



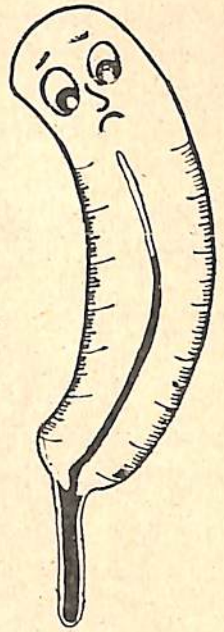
अचानक लाईट चली गई। शाम काफ़ी गहरी हो चुकी थी और अन्दर कमरे में अन्धेरा-ही-अन्धेरा था। गर्मी बहुत थी और नन्हा बालक नींद से जागकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। सौम्या भाग कर उसके पास पहुँची, उसने पहले खिड़की खोल दी। हल्की रोशनी अन्दर आने लगी। वह पलंग पर 'गन्दे भैया' के पास पालथी लगा कर बैठ गई। वह खूब ज़ोर-ज़ोर से रो रहा था। ना जाने सौम्या को क्या हुआ उसने धीरे से शिशु को अपनी गोद में लिटा लिया। गोद में लेते ही वह चुप हो गया। उसने सौम्या की ऊँगली अपने नन्हे हाथ में कस कर पकड़ ली। सौम्या धुँधली रोशनी में उसे एकटक देख रही थी।

उसका मुट्ठी बन्द हाथ, छोटे-छोटे लगातार हलचल करते पाँव, फूले-फूले नरम से गाल और बारीक नरम-से बाल, सौम्या को ''गन्दा भैया'' बहुत प्यारा और अच्छा लग रहा था। वह उसे देखते हुए सोचने लगी- 'यह कितना सुन्दर है। एकदम गुलगुला नरम-नरम है। चिकने-चिकने हाथ–पाँव हैं और बिना दाँत के भी कित्ता अच्छा हँसता है। ये गन्दा भैया नहीं है, बहुत अच्छा है। अब से मैं इसको सचमुच प्यार करूँगी। प्यार करने से बच्चे बड़े होते जाते हैं। देखना मैं खूब प्यार करूँगी तो जल्दी से बड़ा हो जाएगा। फिर हम साथ-साथ, खेलेंगे। मेरा भैया। मेरा प्यारा भैया-----।'

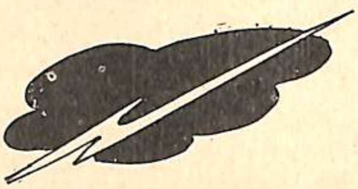
सौम्या ने झुककर प्यारे भैया को चूम लिया। तभी लाइट आ गई और पँखा चलने लगा। सौम्या प्यार की ठण्डी हवा में अपने नन्हे–से भैया को हँसाने लगी। □

विज्ञान-पहेलियाँ

1.
उसके गर्म स्वभाव से,
जाते ठोस पिघल।
और बदलते गैस में-
उससे सभी तरल॥
उसे यंत्र से नापते-
सेल्सियस में आज।
कहो कौन जो जगत में,
आती सबके काज॥



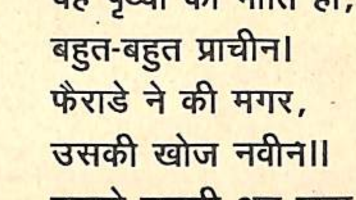
2.
पेड़ पकाते हैं सदा,
उससे अपना खाद्य।
देख उसे है टूटता,
अंधकार का राज्य॥
किन्तु न छू पाया उसे,
अब तक कोई, मित्र!
ध्वनि से भी जो तेज़ है,
ऐसा कौन विचित्र?



3.
वह पृथ्वी की भाँति ही,
बहुत-बहुत प्राचीन।
फैराडे ने की मगर,
उसकी खोज नवीन॥
उससे चलती अब सदा
छोटी-बड़ी मशीन।
कहो कौन जो मेघ में
भी हो जाती लीन॥



4.
बैठ हवा की पीठ पर
सदा करे वह सैर।
कान उसे पहचानते,
उसके हाथ न पैर॥
उसकी शक्ति अपार है,
काँप उठे दीवार।
कहो कौन वह जो करे,
शब्दों का संचार॥



5.
सोने-चाँदी की नहीं
उसे तनिक परवाह।
उसके तनमन में बसी,
बस लोहे की चाह॥
वह लोहे को खींचती,
लाती अपने पास।
बोलो किसके वंश का
कुतुबनुमा में वास॥

❑ जगदीश तोमर

(उत्तर अगले अंक में)

किस्सा आफ़न्ती का

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया



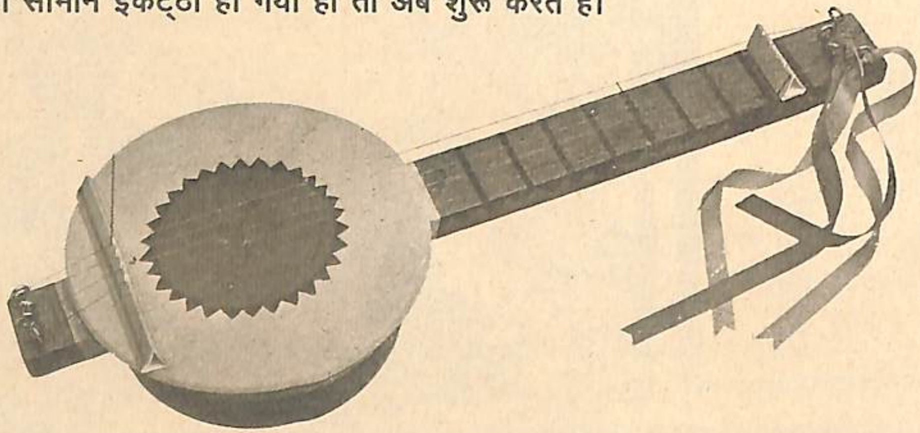

.... मेरे प्यारे दोस्त,
मैं तुम्हें बहुत कुछ
लिखना चाहता हूँ।
लेकिन इस समय मेरे
पीछे एक बदतमीज़
और बेशरम आदमी
खड़ा है, जो चोरी से
मेरी चिट्ठी पढ़ रहा
है...
यह पढ़ते ही वह आदमी बौखला गया और आफ़न्ती के सामने आकर एतराज़ करने लगा......
तुम मुझे गाली क्यों दे रहे हो? मैनें तुम्हारी चिट्ठी कब पढ़ी?
ओह, तुम सचमुच अक्लमन्द हो। अगर तुमने मेरी चिट्ठी नही पढ़ी तो तुम्हें यह कैसे पता चला किं मैं तुम्हें गाली दे रहा हूँ?

बैंजो

चकमक के किसी पिछले अंक में पढ़कर तुमने अपनी संगीत मण्डली के लिए कुछ चीज़ें तो बनाई होंगी। इस बार एक और चीज़ तुम्हारी संगीत मण्डली के लिए। वो है बैंजो। चार कसे हुए तारों का सारा खेल है इसमें। उँगली से तारों को हिलाओ और स्वर लहरी पैदा करो। चाहो तो सभी तारों को एक साथ हिलाओ या एक-एक करके। सुर भी कई तरह के निकाले जा सकते हैं। चलो बातें तो बहुत हुईं अब काम पर आएँ...., पर पहले ये चीज़ें ले आओ-

धागा, रंगीन स्केच पेन, क़ैंची, एक बड़ा गुब्बारा, रंगीन काग़ज़, मोटा काग़ज़, गोंद, आठ स्क्रू-फोटोफ्रेम में लगाने वाले, प्लास्टिक का छोटा डिब्बा (टिन का डिब्बा भी चलेगा), रंग, ब्रश और तीन इंच चौड़ी और लगभग दो फुट लम्बी किसी खोखे की लकड़ी।

अगर सारा सामान इकट्ठा हो गया हो तो अब शुरू करते हैं।





1. डिब्बे के एक किनार पर और उसके ठीक सामने, आड़े में (I) आकार का निशान बना लो। अब इस निशान पर कट लगा लो। ध्यान रहे कि लकड़ी की चौड़ाई तथा मोटाई के बराबर ही कट लगना चाहिए।



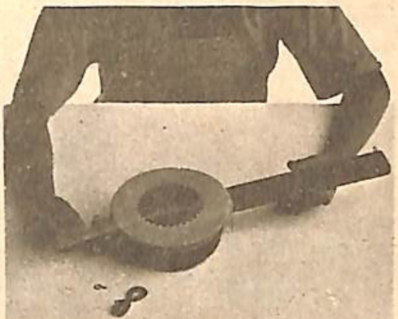
2. कटे हुए हिस्से को बाहर की तरफ निकाल कर लकड़ी को चित्र में दिखाए तरीक़े से दोनों छेदों में घुसा दो। कटे हुए हिस्से को लकड़ी पर कील से ठोक दो।



3. अब इसे यानी लकड़ी और डिब्बे दोनों को रंग लो। रंग और ब्रश तो तुम्हारे पास है ही, रंग में थोड़ी गोंद मिला लेना। यह काम डिब्बे और लकड़ी को सुन्दर बनाने के लिए है। तुम चाहो तो कुछ और तरीके भी इस्तेमाल कर सकते हो।



4. अब गुब्बारे की गर्दन यानी ऊपरी हिस्से को कैंची से काट दो। और फिर गुब्बारे को तान कर डिब्बे पर चढ़ा लो। किनारे पर एक गोंद लगी पट्टी चिपका लो ताकि गुब्बारा निकले नहीं।



5. चित्र में दिखाए तरीके से लकड़ी के दोनों सिरों पर चार-चार स्क्रू लगा दो। ध्यान रहे कि स्क्रू आसानी से चारों दिशाओं में घूम सकें।



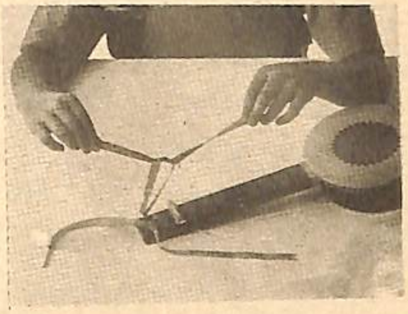
6. अब मोटे कागज से दो त्रिभुजाकार आकृतियाँ बनाओ। एक तो लकड़ी की ही चौड़ाई के बराबर लम्बी और दूसरी उससे तिगुनी लम्बी।



7. अब धागे के चार बराबर टुकड़े लो और उन्हें चारों स्क्रू से इधर भी और चारों स्क्रू से उधर भी बाँध लो।



8 अब त्रिभुजाकार आकृतियों को धागे के नीचे फँसा दो। लकड़ी की चौड़ाई के बराबर लम्बी आकृति को लकड़ी के एक सिरे पर, और तिगुनी लम्बाई वाली आकृति को डिब्बे के ऊपर रखना होगा जैसा कि इस चित्र में दिखाई दे रहा है।



9. बैंजो तो तैयार है अब इसे जितना चाहो सजा-संवार लो जैसा कि चित्र में दिखाई दे रहा है। रिबन भी बाँध सकते हो।

(शेष पृष्ठ 24 का)

रूप से माचिस के खोखे, चाय के डिब्बे और पेंसिल बनाने में होता है।

सेमल के फूल को तरकारी के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। फलों से निकली हुई रूई गद्दे-तकियों में भरी जाती है। पत्तियों से गोंद बनाई जाती है। इसके बीजों से तेल निकाला जाता है जो कि दिये में जलाने के काम आता है। बीज की खली पशुओं के लिए चारे के रूप में काम आती है। इस सबके अलावा इस पेड़ के अलग-अलग हिस्सों से कई तरह की दवाएँ भी बनाई जाती हैं जो कि अलग-अलग रोगों में काम आती हैं।

सेमल का पेड़ एक बहुत ही उपयोगी और सुन्दर पेड़ है। इसकी सबसे बड़ी खासियत यह है कि इस पेड़ की कोई डाल यदि काटकर ज़मीन पर लगा दी जाए तो जल्द ही वो जड़ पकड़कर फलने-फूलने लगती है। सेमल के पुराने पेड़ के तने में बड़े-बड़े कोटर मिलते हैं। इनमें चिड़ियों ख़ासकर तोतों का बसेरा होता है। बसन्त ऋतु में तो सेमल के पेड़ पर पक्षियों का जमघट लग जाता है। इस पेड़ को अंग्रेज़ी में सिल्क कॉटन ट्री ***(SILK COTTON TREE)*** *कहते हैं।*

◻◻◻



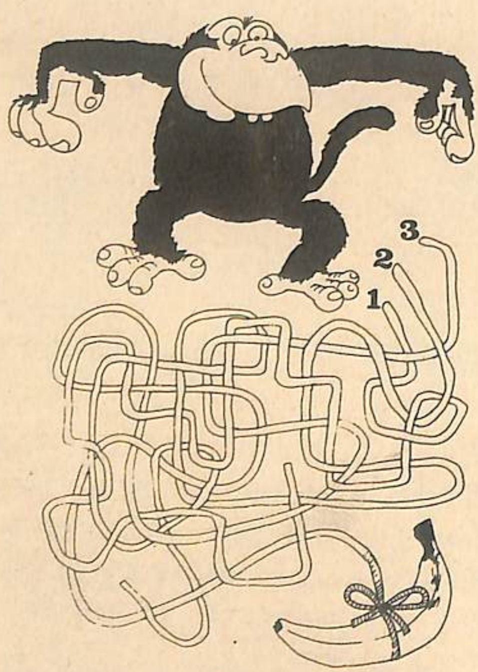
माथापच्ची

(1)

रानू एक रोज़ अपने गाँव से सुबह वाली बस में बैठकर शहर जाने के लिए निकली। उसने देखा कि बस का माइलोमीटर यानी दूरी बताने वाला यंत्र 15951 कि.मी बता रहा था। तुम भी इस संख्या पर ज़रा ध्यान दो।

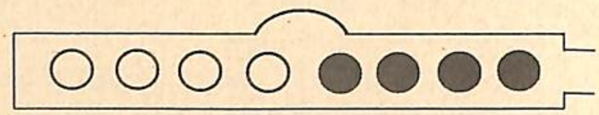
रानू ने मन ही मन सोचा कि इस तरह की उल्टी-सीधी एक समान संख्या तो शायद अब संयोग से ही देखने को मिले! पर उसे 3 घण्टे 40 मिनट बाद ही फिर एक वैसी ही संख्या देखने को मिली। क्या रही होगी वह संख्या? और अगर रानू की बस समान गति से बिना रुके चली हो तो उसकी रफ्तार लगभग कितनी रही होगी?

(2)



इन चिंपाज़ी महाशय को केला चाहिए। लेकिन पहले तय यह करना है कि केला कौन-सी रस्सी के छोर से बंधा है, 1 से, 2 से या 3 से। तुम भी कोशिश करो।

(3)



इस लम्बी पारदर्शक नली में बीच में एक उभार है। और उभार के एक तरफ चार काले और दूसरी तरफ चार सफेद कंचे फँसे हुए हैं। इसके खुले मुँह से एक बार में एक ही कंचा बाहर आ सकता है। अब बताओ अगर तुम्हें चारों काले कंचे अन्दर ही रखते हुए चारों सफेद कंचे बाहर निकालने हों तो क्या करोगे?

(4)

गुड्डा की उतनी ही बहनें हैं, जितने भाई हैं। पर गुड्डा की बहनें अगर अपने भाई-बहन गिनें तो उनके भाईयों की संख्या उनकी बहनों की संख्या से दुगुनी हैं। कितने भाई-बहन हैं गुड्डा के?

(5)

मेज पर तीन माचिस की काड़ियाँ पड़ी थीं। मन्नू ने बिना उनमें कोई और काड़ी मिलाए या उन्हें तोड़े उनको चार बना दिया। कैसे, यह तुम बताओ।

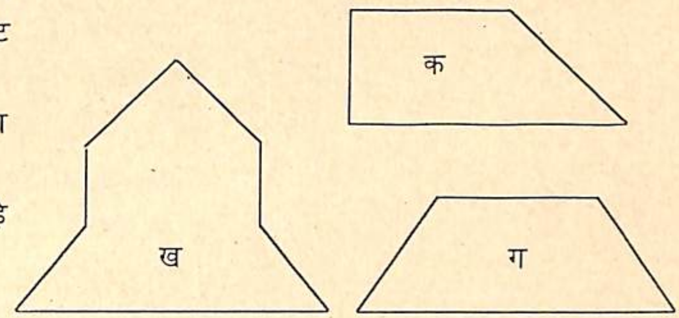
(6)

नीचे के वाक्यों में कुछ हरी-भरी साग-सब्ज़ियों के नाम छुपे हैं। ढूँढो तो जरा।

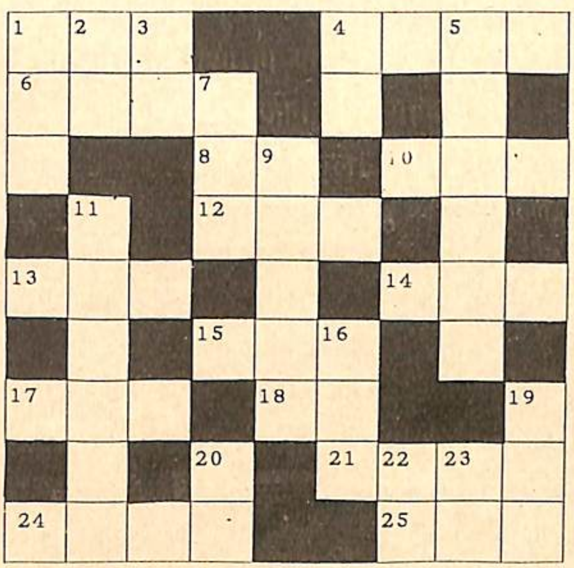
1. अप्पु दीना के घर गया है।
2. अब भागो भी, बारिश होने लगी।
3. हमें मिस पास कल से गणित पढ़ाएँगी।
4. मामू लीला मौसी कहाँ है?
5. शीला के पास बैग नहीं है।
6. रानी बोली, "हमसे मत बोलो।"
7. माँ ने गुस्से से कहा, "अब तुम टर जाओ यहाँ से।"

यहाँ दी हुई आकृतियाँ चार-चार बराबर टुकड़ों को जोड़कर बनी हैं। क्या तुम उन्हें वापस उन्हीं टुकड़ों में बाँट सकते हो? लेकिन ध्यान रहे कि –

1. **क** आकृति के सभी टुकड़ों का आकार **क** आकृति जैसा ही हो।
2. **ख** आकृति को भी ऐसे बाँटना है कि उसके चारों टुकड़े भी **क** के आकार के हों।
3. **ग** आकृति के टुकड़े **ग** आकृति जैसे ही हों।



वर्ग पहेली - 38



संकेत : बाएँ से दाएँ

1. अबला का उल्टा (3)
4. नमकीन के लिए प्रसिद्ध मध्यप्रदेश का एक ज़िला (4)
6. व्यायाम (4)
8. ओर- छोर (2)
10. बलवान, प्रलय के बस में है (3)
12. इसमें कलाम जोड़ के देखो (3)
13. अँगूठी (3)
14. महाभारत का एक प्रसिद्ध चरित्र (3)
15. दक्षिण दिशा (3)
17. अलका की गड़बड़ी में है कमी और खराब समय (3)
18. ठंडा भी, हलुआ भी, सिरहाना भी (2)
21. माह तकने की गड़बड़ में है बेवकूफी (4)
24. मालामाल को मात्राओं से कंगाल कर दो (4)
25. नम्रतापूर्वक कुछ माँगना (3)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. कुल (3)
2. शक्तिसूचक, वाहन, पर्याप्त भी है (2)
3. मुँह में पाया जाने वाला एक पाचक द्रव (2)
4. कपड़े के छोटे छेदों को धागे से भरना (2)
5. जय जवान जय किसान का नारा देने वाले (2,4)
7. तह तक जाने में अधीनता है (3)
9. किसी नू याद में है रूढ़ीवादी विचारों वाला (5)
11. यह मुहावरा संकेत 5 के व्यक्ति के लिए बिलकुल ठीक है (3,1,3)
16. बहरा की उलटफेर में है तौर पर (3)
19. उस के तन में है चिह्न (3)
20. करतल ध्वनि भी और तालाब भी (2)
22. मान गया में है धन, ममता, दया, जादू (2)
23. चकमक में है बाल (2)

● *चम्पालाल कुशवाह, हिरणखेड़ा, होशंगाबाद, म.प्र. द्वारा भेजी गई वर्ग पहेली पर आधारित*

● सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को चकमक तीन-माह तक उपहार में भेजी जाएगी। हल के लिए वर्ग पहेली की जाली को चकमक से काटकर न भेजें। बल्कि उसमें जो शब्द आने वाले हों उन्हें संकेत के ही नंबर देकर लिख दें। वर्ग पहेली - 38 का हल नवम्बर, 94 अंक में देखें।

मनुष्य महाबली कैसे बना!

नए लोग

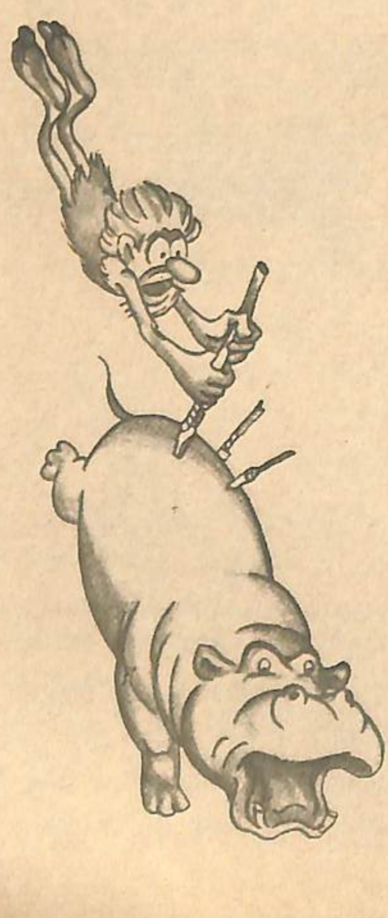
हम जब घड़ी की तरफ देखते हैं, तो वह निश्चल प्रतीत होती है। लेकिन घण्टा-दो-घण्टा गुज़र जाने पर हम देखते हैं कि सुई आगे सरक आई है।

ज़िन्दगी में भी यही बात है। अपने पास-पड़ोस में या स्वयं अपने तक में जो परिवर्तन हो रहे हैं, उन पर हमारा तुरन्त ध्यान नहीं जाता। हम सोचते हैं कि इतिहास की घड़ी की सुई निश्चल है। और कई वर्ष बाद जाकर ही हमारा ध्यान अचानक इस ओर जाता है कि सुई आगे सरक आई है, कि हम खुद बदल गए हैं, कि हमारे इर्द-गिर्द की हर चीज़ बदल गई है।

हम पुराने की नए से तुलना अपनी डायरियों, तसवीरों, अख़बारों और किताबों को देखकर कर सकते हैं। हमारे पास तुलना करने की चीज़ें हैं। लेकिन हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वजों के पास पुराने की नए से तुलना करने के लिए कुछ भी न था। उनका ख़याल था कि जीवन निश्चल, अपरिवर्तनशील है। पुराने की नए से तुलना किए बिना परिवर्तन को देख पाना उतना ही असम्भव है, जितना घड़ी पर घण्टों के अंकों के बिना उसकी सुई की गति को देखना।

पत्थर के औज़ार गढ़नेवाला हर कारीगर उस आदमी के हर तौर-तरीक़े की नकल करने की कोशिश करता, जिसने उसे अपना हुनर सिखाया था।

नया मकान बनाते समय औरतें चूल्हा बिलकुल उसी तरह बनातीं, जिस तरह उनके पहले उनकी नानियाँ-दादियाँ बनाया करती थीं। शिकारी अपने शिकार को प्राचीन रिवाज़ के अनुसार ही मारा करते।



लेकिन फिर भी, बिना किसी का ध्यान गए, लोगों ने धीरे-धीरे अपने औज़ार, अपने रहने के स्थान और काम करने के अपने तरीक़े बदल दिए।

हर नया औज़ार आरम्भ में बहुत-कुछ पुराने औज़ार जैसा ही होता था। पहला नेज़ा भाले से बहुत भिन्न नहीं था। लेकिन बाण और भाले से शिकार में ज़रा भी समानता नहीं है।

आदमी के केवल औज़ार और हथियार ही नहीं बदल गए थे-वह खुद भी बदल रहा था। यह बात उन ठठरियों (अस्थिपंजर) से देखी जा सकती है, जो विभिन्न खुदाई-स्थलियों पर मिली हैं। अगर

हम गुफा में पहले-पहल घुसने वाले आदमी की तुलना उसे हिमयुग के अन्त में छोड़ने वाले आदमी से करें, तो हमें लगेगा कि वे दो भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणी थे। निआंडरथाल-मानव गुफा में घुसनेवाला पहला मनुष्य था। उसकी कमर झुकी हुई थी, वह चलता क्या, लड़खड़ाता था, उसके चेहरे पर मुश्किल से ही कोई माथा था और ठोड़ी थी ही नहीं। लेकिन सुगठित शरीर वाला और लम्बा क्रोमग्नन-मानव, जो गुफा से निकलने वाला अन्तिम मानव था, सूरत-शक़्ल में हमसे मुश्किल से ही कुछ भिन्न था।

घर की कहानी का पहला अध्याय

जिस प्रकार मनुष्य का जीवन बदल गया, उसी प्रकार उसका आवास भी बदल गया। अगर हम उसके घर की कहानी लिखें, तो हमें गुफा से शुरुआत करनी पड़ेगी। प्रकृति द्वारा निर्मित इस आवास को प्रागैतिहासिक मानव ने बनाया नहीं, पांया था।

लेकिन प्रकृति कोई बहुत अच्छी भवन-निर्मात्री नहीं है। जब उसने पहाड़ों और पहाड़ी गुफाओं को बनाया, तो उसने इस बात का ज़रा भी ध्यान नहीं रखा कि कभी कोई इन गुफाओं में रहेगा भी। यही कारण है कि जब प्रागैतिहासिक लोग रहने के लिए कोई गुफा तलाश करते थे, तो उन्हें शायद ही कोई रहने लायक गुफा मिल पाती थी। या तो छत बहुत ही नीची होती, या उसका मुँह इतना छोटा होता कि रेंगकर भीतर जाना भी मुश्किल होता।

सारा-का-सारा समूह आवास को रहने लायक बनाने के काम में जुट जाता। वे गुफा के फर्श और दीवारों को चकमक की खुरचनियों और लकड़ी की बल्लियों से खुरचते और समतल बनाते।

दरवाज़े के पास वे चूल्हे के लिए एक गढ़ा खोदते और उसके चारों ओर पत्थरों की तह बिछा देते। माताएँ ज़मीन में उथले गढ़े खोदकर और गद्दे की जगह उनमें चूल्हे की गरम राख बिछाकर अपने बच्चों के लिए ''पालने'' बनातीं।

गुफा के किसी दूरवर्ती कोने में वे रीछ के माँस और खाने-पीने के दूसरे सामान का गोदाम बना लेते।

प्रागैतिहासिक लोग इस प्रकार प्रकृति द्वारा निर्मित गुफा को (उसे अपने श्रम द्वारा मानव के आवास में बदल करके) सुधारते थे।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, लोग अपने आवासों को सुसज्जित करने के अधिकाधिक प्रयास करने लगे।

अगर उन्हें ऊपर लटकी चट्टान की प्राकृतिक छत मिल जाती, तो वे उसके इर्द-गिर्द दीवारें बना देते। अगर उन्हें कोई ऐसी चीज़ मिल जाती जो चार दीवारों का काम दे सके, तो वे उस पर छत डाल देते।

दक्षिणी फ्रांस के पहाड़ों में अभी भी एक प्रागैतिहासिक आवास के अवशेष मिले हैं। यहाँ के रहनेवालों ने इसे एक अजीब नाम दिया है। वे इसे ''शैतान का चूल्हा'' कहते हैं। उनका ख़याल था कि बड़ी-बड़ी चट्टानों के बने इस आश्रय-स्थल में शैतान ही चूल्हा बनाकर ताप सकता था। अगर उन्हें खुद अपने प्रागैतिहासिक पूर्वजों की ज़रा ज़्यादा जानकारी होती, तो वे समझ जाते कि शैतान का चूल्हा इन्सान के हाथों का बनाया हुआ है।

यहाँ पर प्रागैतिहासिक शिकारियों को ऊपर लटकी हुई एक चट्टान के नीचे दो दीवारें मिल गई थीं। ये दीवारें पहाड़ पर से खिसककर आए पत्थरों से बनी थीं। उन्होंने दो दीवारें और बना दीं और उन्हें उन दो दीवारों के साथ जोड़ दिया, जो उन्हें वहाँ मिली थीं। एक दीवार पत्थर की बड़ी-बड़ी सिल्लियों की बनी थी और दूसरी आपस में गूँथकर बुनी हुई डालियों से अपनी जगह पर जमाई गई बल्लियों की बनी थी। और उस पर जानवरों की खालें मढ़ी हुई थीं। इसका हम अनुमान ही कर सकते हैं कि चौथी दीवार कैसी रही होगी, क्योंकि समय ने इसे कभी का धूल में बदल दिया है।

ज़मीन में खुदे एक बड़े गढ़े के इर्द-गिर्द दीवारें थीं। इस गढ़े के पेंदे में पुरातत्वविदों को चकमक की छिपटियाँ और हड्डी तथा सींग के बने औज़ार मिले।

शैतान का चूल्हा आधा घर और आधी गुफा है। यहाँ से असली घर बनाना ज़्यादा दूर नहीं रहा था, क्योंकि जहाँ प्रागैतिहासिक मानव ने एक बार दो दीवारें बनाना सीख लिया, तो जल्दी ही उसने चार दीवारें बनाना भी सीख लिया।

और इस प्रकार जल्दी ही मकान बनने लगे - अब गुफाओं में नहीं, ऊपर लटकी चट्टान की छाया में नहीं, बल्कि खुले में।



प्रागैतिहासिक शिकारियों के घर

पूर्व सोवियत संघ में कई जगहों पर प्रागैतिहासिक शिकारियों के कई शिविरस्थल मिले हैं। वहाँ के पुरातत्वविदों ने इन स्थलों की खुदाई की है। ऐसे ही एक स्थल की खुदाई से शिकारियों के घर का एक खाका उभर कर आया। यह घर आकार में एक गोल खाई जैसा था। दीवारें बाहर की ओर से पत्थर की सिल्लियों और मैमथ के दाँतों और जबड़ों की हड्डियों से ढकी थीं। दीवारें ज़्यादातर जानवरों की खालों से मढ़े लकड़ी के खम्भों की बनी थीं। खम्भे ऊपर आपस में मिलकर छत बनाते थे। पत्थर की भारी सिल्लियाँ और मैमथों की हड्डियाँ बाहरी दीवारों को मज़बूती देने के लिए ऐन वहाँ तक धकेलकर लाई गई थीं।

बाहर से आवास एक बड़े तम्बू जैसा दिखाई देता था। दीवारों

के पास उन्हें हड्डी की बनी नक्काशी की हुई, स्त्रियों की दो लघु मूर्तियाँ मिलीं। उनमें से एक बेहद मोटी थी और दूसरी पतली थी। और मूर्तिकार ने सम्भवतः इन्हें जीवित स्त्रियों को देखकर बनाया था।

फ़र्श के बीच में खुदा एक गोल गढ़ा सन्दूक का काम देता था। उसमें मिली चीज़ें बड़ी मूल्यवान रही होंगी - हड्डी की एक सुई, बर्फ़िस्तानी लोमड़ी के दाँतों के बने मनके और मैमथ की पूँछ।

प्रागैतिहासिक निवासी सिलाई के लिए सुई का इस्तेमाल करते थे। मनके गहने थे। लेकिन मैमथ की पूँछ को सुरक्षित रखने के लिए उन्होंने इतना जतन क्यों किया था?

ऐसी और भी लघु मूर्तियाँ मिली हैं, जो प्रागैतिहासिक शिकारियों को अपने कन्धों पर जानवरों की खालें डाले और पीछे दुम लटकाए दिखाती हैं, जिससे कि वे उन जानवरों जैसे लगें, जिनकी खालें वे पहने हुए हैं। उन्होंने ऐसा क्यों किया? सोचो!

ऐसे ही एक अन्य घर में चकमक और हड्डी के कई सुनिर्मित औज़ार और हाथी दाँत पर उकेरी हुई कई स्त्री मूर्तियाँ भी मिली थीं। उनमें से एक गुदी हुई थी और चमड़े का एप्रन पहने थी। इसका मतलब है कि ये लोग चमड़े को कमाना जानते थे।

इन प्रागैतिहासिक शिकारियों के आवास हमारे अपने घरों जैसे ज़रा भी नहीं थे। बाहर से उनका जो हिस्सा दिखाई देता था, वह बस छत थी, जो एक गोल टीले जैसी नज़र आती थी। प्रवेश "चिमनी" में होकर होता था, क्योंकि अकेला रास्ता छत में वह छेद ही था, जिससे आग का धुआँ बाहर जाता था।

मिट्टी की दीवारों के साथ-साथ बेंचों की जगह मैमथों के जबड़ों की हड्डियाँ थीं। धरती उनकी शैया भी थी। वे लोग एक समतल बनाई हुई आयताकार जगह पर सोते थे और मिट्टी के ढेर तकियों का काम देते थे। हड्डी की बेंचों और मिट्टी के पलंगों वाले इस घर की मेज़ें पत्थर की बनी हुई थीं।

सबसे रोशनीदार जगह, चूल्हे के पास, काम करने का एक ठीहा क़ायम किया गया था। यह पत्थर की चिकनी सिल्लियों का बना था और इस पर पुरातत्वविदों को बहुत से औज़ार, चकमक और हड्डी की छिपटियाँ और टुकड़े और अधूरी चीज़ें मिलीं। मेज़ पर हड्डी के कुछ मनके बिखरे पड़े थे। कुछ मनके चिकने किए हुए थे और उनमें छेद किए हुए थे। बाक़ी अभी तक अधूरे ही थे। कारीगर ने हड्डी की एक छिपटी पर कई जगह खाँचे डाल दिए थे, लेकिन उसे मनकों में काटने का उसे समय नहीं मिला था। कुछ ऐसा हो गया था जिसके कारण लोगों को अपना काम रोककर घर को छोड़ देना पड़ा था।



इस आवास में मिली हर चीज़ पर कितने ही घण्टे लगाए गए



थे। मिसाल के तौर पर, यहाँ हड्डी की एक सुई है, जो मानव-जाति के इतिहास में पहली सुई है। कितनी मामूली चीज़ है, लेकिन इसको बनाने के लिए बड़ी निपुणता आवश्यक थी।

हड्डी की सुई बनाने के लिए सबसे पहले, चकमक के चाकू से ख़रगोश की हड्डी से एक छिपटी अलग कर ली जाती थी। इसके बाद इसे सुई जैसा बना लिया जाता था। फिर एक नुकीले चकमक से उसमें छेद किया जाता। और अन्त में, सुई को पत्थर की सिल्ली पर घिसकर चिकना कर लिया जाता था।

एक सुई के बनाने में इतने औज़ारों और इतने समय की ज़रूरत पड़ती थी! हर क़बीले में ऐसे कुशल कारीगर नहीं थे जो हड्डी की सुइयाँ बना सकते हों। हड्डी की सुई प्रागैतिहासिक काल में सबसे मूल्यवान चीज़ों में एक थी।

(अगले अंक में जारी)

'मनुष्य महाबली कैसे बना!' से साभार।

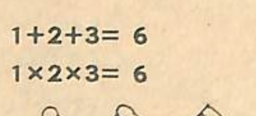
प्रस्तुतिः राजेश उत्साही

माथापच्ची हलः जुलाई, 1994 अंक के

1. 

2. सौ किलोमीटर।

3. 1+2+3= 6
   1×2×3= 6

4. 

6. चार और आठ इंच।

7. दोनों ही स्थितियों में पानी का तल पहले जैसा ही रहेगा। सोचकर बताओ क्यों?

9. चौथा चित्र

10. एक ढेरी

वर्ग पहेली -35 का हल

1 अ	धि	2 का	3 र		4 प	र	5 स
मे		6 क	म	लि	नी		न
7 ज	8 र		जा		र		द्र
9 न	म	की	न			10 क	
	क			11 सि	ल	हा	12 रा
13 नि		14 का		ह		15 र	ज
य		16 बि	सा	र	17 ना		दू
18 म	स	ल		19 न	स	फ	त

वर्ग पहेली-35 छपते समय जाली का एक खाना जो कि ख़ाली रहना चाहिए था, बन्द हो गया था, इसका हमें खेद है। इस पहेली का कोई सर्वशुद्ध हल प्राप्त नहीं हुआ है। कम से कम दो गलतियों वाले पाँच हल प्राप्त हुए हैं। इन्हें भेजने वाले हैं- जीवनसिंह सिसोदिया, निपानिया हूरहूर, देवास; नीलम दुबे, होशंगाबाद; मृगेन्द्र श्रीवास्तव, बुढ़ार, शहडोल। **सभी म.प्र.**। नसीमा बानो खान, फतेहपुर, **उ.प्र.**। सुरेन्द्र कुमार पण्ड्या, उदेला, बाँसवाड़ा, **राजस्थान**। इन सभी को चकमक तीन माह तक उपहार में भेजी जाएगी।





दोनों चित्र : अमनदीप अरोरा, तीसरी,
नरसिंहपुर, म.प्र.

पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/94



रीनू शर्मा, भोपाल

रेक्स डी रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016 से प्रकाशित।
संपादक : विनोद रायना